पढ़ें और सीखें योजना

# सागर तल पर एक खान
## बहुधात्विक पिंडों की

प्रतिमा जौहरी

विभागीय सहयोग
राम दुलार शुक्ल

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

जून 1994
आषाढ 1916
PD 10T OP



**प्रकाशन सहयोग**

सी.एन.राव *अध्यक्ष*, प्रकाशन विभाग

**प्रभाकर द्विवेदी** : मुख्य सम्पादक
**पूरनमल** : सम्पादक
**ओम प्रकाश** : सम्पादन सहायक
**यू. प्रभाकर राव** : मुख्य उत्पादन अधिकारी
**डी. साईं प्रसाद** : उत्पादन अधिकारी
**डी. के. शेन्डे** : वरिष्ठ कलाकार
**विकास ब. मेश्राम** : सहायक उत्पादन अधिकारी
**राजेश पिप्पल** : उत्पादन सहायक

**एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय**

| | | | |
|---|---|---|---|
| एन सी ई आर टी. कैम्पस | सी डब्ल्यू.सी कैम्पस | नवजीवन ट्रस्ट भवन | सी डब्ल्यू सी. कैम्पस |
| श्री अरविंद मार्ग | चितलापक्कम, क्रोमपेट | डाकघर नवजीवन | 32, बी टी रोड, सुखचर |
| नई दिल्ली 110016 | मद्रास 600064 | अहमदाबाद 380014 | 24 परगना 743179 |

**आवरण : दिलीप कुमार शेन्डे**

**रु. : 21.00**

प्रकाशन विभाग में, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा जूम डेस्कटॉप प्रिन्टर्स, 1899 उदयचन्द मार्ग, कोटला मुबारकपुर, नई दिल्ली 110003 द्वारा लेज़र कम्पोज होकर, इंडिया आफसेट प्रेस, ए-1, मायापुरी औद्योगिक क्षेत्र, रिंग रोड, नई दिल्ली 110064 में मुद्रित।

# प्राक्कथन

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य को बेहतर इंसान बनाना है। शिक्षा मनुष्य का शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक व नैतिक दिशा में विकास करके उसे एक सम्पूर्णता प्रदान करती है। हमारी शिक्षा-व्यवस्था में ऐसा तभी संभव हो पाएगा जब बच्चों में पूर्व-प्राथमिक व प्राथमिक स्तर से ही ऐसे मूल्यों की पौध लगाई जाए कि वे बौद्धिक और काल्पनिक क्षमताओं का विकास करना सीखने लगें।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् बच्चों में अध्ययन की क्षमता व रुचि दोनों का ही विकास करने के लिए सदा तत्पर रही है और समय-समय पर इस क्षेत्र में विभिन्न प्रयास व नए-नए प्रयोग करती रहती है। पाठ्यक्रम में निर्धारित पुस्तकों के प्रकाशन से भिन्न परिषद् ने बच्चों में अध्ययन प्रवृत्ति के विकास के लिए समय-समय पर पूरक अध्ययन सामग्री तथा उसके अंतर्गत प्रयोगात्मक स्तर पर कई पुस्तक-मालाएँ व परियोजनाएँ शुरू की हैं। इन सभी प्रयासों का मूल उद्देश्य है बच्चों की पुस्तकों से दोस्ती कराना।

पूरक अध्ययन सामग्री के प्रकाशन को इस विचार ने जन्म दिया गया है कि बच्चों की पाठ्यपुस्तकों की एकरसता से इतर कुछ ऐसी अध्ययन सामग्री भी दी जानी चाहिए जो कथ्य और कलेवर दोनों ही पक्षों में समृद्ध हो। साथ ही परोक्ष रूप से उन तक वांछित मानवीय मूल्य भी पहुँचाती हो।

लगभग 30 वर्षो से पूरक अध्ययन की पुस्तकों के प्रकाशन का काम जारी रखते हुए परिषद् में इस क्षेत्र में कुछ और अधिक करने की ललक थी और इसी का परिणाम है हमारी **पढ़ें और सीखें** योजना। इसके अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकों के माध्यम से यह कोशिश की गई है कि बच्चे इस दुनिया में बसी हुई अनेक **अनजान दुनियाओं** से भी परिचित हों तथा उन्हें अपने भीतर के संसार को जानने का भी मौका मिले। उनमें पुस्तकों के प्रति अपनापन व लगाव उपजे।

इन पुस्तकों में कथा साहित्य, भारतीय संस्कृति और इतिहास, विभिन्न महापुरुषों की जीवनियों व आत्मकथाओं आदि से लेकर विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे आधुनिकतम

आविष्कारों व विकासकारी गतिविधियों तथा जनसंख्या शिक्षा तक का फैलाव समेटा गया है। पुस्तकों के माध्यम से अपने बाल व किशोर पाठकों को परिषद् सामाजिक जागरूकता, धर्म-निरपेक्षता और वैज्ञानिक मानवतावाद सरीखे मूल्य भी दे रही है।

**पढ़ें और सीखें** पुस्तक-माला के अंतर्गत पाठ्यक्रम की पुस्तकों से कुछ हटकर तैयार की जाने वाली विज्ञान की पुस्तकों का उद्देश्य है पाठकों को वैज्ञानिक विषयों की सही जानकारी देना तथा उनमें वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास करना। आशा है **डॉ. प्रतिमा जौहरी** द्वारा लिखित प्रस्तुत पुस्तक **महासागर तल पर एक खान—बहुधात्विक पिंडों की** हमारे पाठकों के लिए आनंदप्रद व उपयोगी सिद्ध होगी।

**पढ़ें और सीखें** पुस्तक-माला के अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने की दिशा में दिए गए हर सुझाव का परिषद् स्वागत करेगी।

**अशोक कुमार शर्मा**

*निदेशक*

नई दिल्ली — राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

# दो शब्द

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) की **पढ़ें और सीखें** योजना के अंतर्गत यह एक छोटा-सा प्रयास है। जब परिषद् के प्रगतिशील निदेशक डॉ. अशोक कुमार शर्मा ने मुझे इस दिशा में विज्ञान के विषयों का कार्यभार संभालने के लिए आमंत्रित किया तो अपने वैज्ञानिक मित्रों की अतिव्यस्तता के कारण यह उत्तरदायित्व स्वीकार करने में मुझे संकोच था।

इस दिशा में मेरा प्रयास रहा है कि विज्ञान के विभिन्न विषयो के जाने-माने विद्वानों को इस सराहनीय कार्य के लिए निमंत्रित कर सकूँ। ऐसा मेरा विश्वास है कि खोज और अनुसंधान की आनंदपूर्ण अनुभूतियों वाले वैज्ञानिक ही अपने आनंद की एक झलक बच्चों तक पहुँचा सकते हैं। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ कि उन्होंने अंकुरित होने वाली पीढी के लिए अपने बहुमूल्य समय में से कुछ क्षण निकालने का प्रयास किया। बालक राष्ट्र की सब से बहुमूल्य और महत्वपूर्ण निधि है और मेरे लिए यह किंचित आश्चर्य और संतोष की बात है कि हमारे इतने लब्धप्रतिष्ठ और अत्यंत व्यस्त वैज्ञानिक बच्चों के लिए थोड़ा परिश्रम करने के लिए सहर्ष मान गए हैं। मैं सभी वैज्ञानिक मित्रों के लिए हृदय से आभारी हूँ।

इन पुस्तकों की तैयारी में हमारा मुख्य ध्येय रहा है कि विषय ऐसी शैली में प्रस्तुत किया जाए कि बच्चे स्वयं इसकी ओर आकर्षित हों, साथ ही भाषा इतनी सरल हो कि बच्चों को इनके अध्ययन से विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को समझने में कोई कठिनाई न हो। इन पुस्तकों के पढ़ने से उनमें अधिक पढ़ने की रुचि पैदा हो; उनके नैसर्गिक कौतूहल में वृद्धि हो जिससे ऐसे कौतूहल और उसके समाधान के लिए स्वप्रयत्न उनके जीवन का एक अंग बन जाए।

यह योजना परिषद् के वर्तमान निदेशक **डॉ. अशोक कुमार शर्मा** की प्रेरणा से चल रही है। मैं उन्हें इसके लिए बधाई और धन्यवाद देता हूँ।

**डॉ. प्रतिमा जौहरी** ने इस पुस्तक को लिखने के लिए मेरा अनुरोध स्वीकार किया

जिसके लिए मै हृदय से आभारी हूँ। परिषद् के विज्ञान एवं गणित्त शिक्षा विभाग के प्रो राम दुलार शुक्ल विज्ञान की पुस्तकों के लेखन से सबंधित योजना के संयोजक एवं सपादक हैं और बहुत परिश्रम और कुशलता से अपना कार्य कर रहे हैं। प्रो. अमरनाथ महेश्वरी **पढ़ें और सीखें** योजना के संचालक हैं। मैं इन दोनों को हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

आशा है कि ऐसी पुस्तकों से हमारी नई पीढ़ी की बाल्यकाल ही में वैज्ञानिक मानसिकता का शुभारंभ हो सकेगा और विज्ञान के नवीनतम ज्ञान के साथ ही साथ उन्हें अपने देश की प्रगतियों एवं वैज्ञानिकों के कार्य की झलक मिल सकेगी जिससे उनमें अपने राष्ट्र के प्रति गौरव की भावना का भी सृजन होगा।

**रामचरण मेहरोत्रा**

*अध्यक्ष*

**'पढ़ें और सीखें योजना'**

(विज्ञान)

# आमुख

**पढ़ें और सीखें** योजना के अंतर्गत अब तक काफी पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी हैं। इस योजना के अंतर्गत विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों जैसे भौतिकी, रसायन, गणित, पर्यावरण, अंतरिक्ष एवं ब्रह्मांड विज्ञान, नाभिकीय एवं सौर ऊर्जा, आयुर्विज्ञान, समुद्र विज्ञान, राकेटरी, कम्प्यूटर, बायोटेक्नालॉजी, इंजीनियरिंग आदि में पुस्तकों का निर्माण हुआ है। विज्ञान के अन्य बहुत से नए क्षेत्रों में पुस्तकों का लिखना जारी है। विज्ञान के क्षेत्र में तैयार की जाने वाली इन पुस्तकों के लेखन में हमारे देश के जाने माने वैज्ञानिक सक्रिय योग दे रहे हैं और वे अपनी वैज्ञानिक अनुभूतियों को सरल एवं सुरुचिपूर्ण भाषा में बच्चों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। देश के इन लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिकों को योजना में सम्मिलित करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि इन पुस्तकों में लिखी गई विषयवस्तु प्रामाणिक होगी तथा हमारे बच्चे यह महसूस करेंगे कि देश के जाने माने वैज्ञानिक उनके लिए उनके स्तर पर उतरकर विज्ञान के गूढतम रहस्यों को सुंदर एव सरल भाषा में प्रस्तुत करने के लिए कृत संकल्प हैं। इससे बच्चों को, जो हमारे भावी वैज्ञानिक हैं, विज्ञान के क्षेत्र में बहुत अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। विज्ञान की इन पुस्तकों के द्वारा हमें पूर्ण आशा है कि बच्चों को आधुनिकतम वैज्ञानिक विषयों की सही जानकारी मिलेगी, साथ ही उनके अंदर एक वैज्ञानिक मानसिकता भी पैदा होगी।

प्रस्तुत पुस्तक **महासागर तल पर एक खान—बहुधात्विक पिंडों की** के लेखन के लिए **डॉ. प्रतिमा जौहरी** ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया जिसके लिए हम उनके अत्यन्त आभारी हैं। इस योजना के अंतर्गत तैयार हो रही विज्ञान की पुस्तकों के लेखन का मार्गदर्शन दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति प्रो. रामचरण मेहरोत्रा कर रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लेखन के संयोजन एवं अंतिम सपादन आदि का दायित्व हमारे विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के प्रो. राम दुलार शुक्ल वहन कर रहे हैं।

मैं प्रो. रामचरण मेहरोत्रा और अपने सहयोगी प्रो. शुक्ल को हार्दिक धन्यवाद एवं बधाई देता हूँ।

इस पुस्तक को इतने अच्छे ढंग से प्रकाशित करने के लिए मैं परिषद् के प्रकाशन

विभाग के कार्यकर्ताओं, विशेषकर विभागाध्यक्ष श्री सी.एन.राव और मुख्य संपादक श्री प्रभाकर द्विवेदी को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों एवं बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी अधिक उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

**अमर नाथ महेश्वरी**
*प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष*
विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण प्ररिषद्

# लेखक परिचय

– **प्रतिमा जौहरी,** कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल से एम.एससी. (भूगर्भ विज्ञान), .पीएच.डी.।

– बहुधात्विक पिंड सर्वेक्षण योजना की एकमात्र महिला वैज्ञानिक। आंकड़े एकत्र करने हेतु लगभग 300 दिन की समुद्री यात्रा।

– देश विदेश की प्रमुख हिन्दी-अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित।

– संप्रति : वरिष्ठ वैज्ञानिक, **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा**।

# आभार


1. **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा** के श्री रवीन्द्रनाथ नायर (संचालक–बहुधात्विक पिंड योजना), डा. विजय कुमार कोडागली, डा. वीरूपाक्ष बणकार, श्री रवीन्द्रनाथ उच्छिल, श्री उमेश सिरसत, श्री प्रियंकर पालीवाल, डा. जेनेप्पा पाट्टण एवं श्री स्वामी प्रकाश शर्मा के प्रति।

2. योजना के भूतपूर्व संचालक स्वर्गीय डा. हसन नसीम सिद्दीकी सहित **बहुधात्विक पिंड सर्वेक्षण** योजना के सभी सहयोगियों के प्रति, जिनके 10 वर्षों से अधिक किये गए प्रयत्नों को लिपिबद्ध करने का यह प्रयास किया गया।

3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के प्रो. राम दुलार शुक्ल (**समन्वयक**) एवं प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष सी.एन.राव तथा उनके अन्य सहयोगियों के प्रति, जिनके प्रयास से यह पुस्तक इतने अच्छे ढंग से प्रकाशित की जा सकी।

4. **महासागर विकास विभाग,** नई दिल्ली।

# अनुक्रम

# विज्ञान संबंधित मूल्य

जिज्ञासा, ज्ञान-पिपासा, वस्तुनिष्ठता, ईमानदारी व सच्चाई, प्रश्न करने का साहस, क्रमबद्ध तर्क, प्रमाण/सत्यापन के पश्चात स्वीकृति, खुला दिमाग, पूर्णता प्राप्त करने की अभिलाषा तथा मिलजुल कर कार्य करने की भावना आदि विज्ञान संबंधी कुछ आधारभूत मूल्य हैं। इन मूल्यों द्वारा विज्ञान के उन प्रक्रमों को अभिलक्षणित किया जाता है, जो प्रकृति एवं उसकी अपघटनाओं से संबंधित सत्य के अन्वेषण में सहायता प्रदान करते हैं। विज्ञान का उद्देश्य विभिन्न वस्तुओं एवं अपघटनाओं की व्याख्या करना है। अतः विज्ञान सीखने एवं उसका अभ्यास करने के लिए –

* **अपने परिवेश की वस्तुओं तथा घटनाओं के प्रति जिज्ञासु बनें।**
* **प्रचलित विश्वासों एवं मान्यताओं पर प्रश्नचिह्न लगाने का साहस करें।**
* **''क्या'', ''कैसे'' तथा ''क्यों'' में प्रश्न करें एवं सूक्ष्म प्रेक्षणों, प्रयोगों, परामर्शों, चर्चाओं व तर्कों द्वारा अपना उत्तर प्राप्त करें।**
* **प्रयोगशाला में अथवा उसके बाहर प्राप्त अपने प्रेक्षणों एवं प्रायोगिक परिणामों को सच्चाईपूर्वक लिखें।**
* **आवश्यकता पड़ने पर, प्रयोगों की पुनरावृत्ति सावधानीपूर्वक एवं क्रमबद्ध तरीके से करें, किन्तु किसी भी परिस्थिति में अपने परिणामों में हेरफेर न करें।**
* **तथ्यों, विचार-बुद्धि एवं तर्कों द्वारा अपना मार्गदर्शन करें, पूर्वाग्रहों से ग्रस्त न हों।**
* **अनवरत एवं समर्पित कार्य के द्वारा नई खोजों एवं नए आविष्कारों के लिए उत्कट अभिलाषा रखें।**

# 1

# खनिजों की तलाश महासागर में

विज्ञान की उन्नति ने देश को अनेकों नए उद्योगों की ओर अग्रसर किया है। नित नए कल-कारखाने लगाए जा रहे हैं। 'हरित क्राँति' ने कृषि-क्षेत्र में बहार ला दी है। इन सबके बावज़ूद भी, दिनों-दिन बढ़ती जनसंख्या के कारण सब कुछ विभाजित हो जाता है और उन्नति का ज़्यादा असर दिखाई नहीं देता। अगर जनसंख्या इसी तरह बढ़ती रही तो एक दिन पृथ्वी पर उपस्थित सब संसाधन (Resources) ख़त्म होने लगेंगे। ऐसी स्थिति में मनुष्य को एक बार पुनः महासागरों की ओर लौटना पड़ेगा। इन्हीं महासागरों में करोड़ों वर्ष पूर्व जीवन की शुरूआत हुई थी और ये महासागर ही आज उसकी रक्षा करेंगे।

कभी समुद्र की ओर देखें तो लगता है कितनी विस्तृत है इसकी जलराशि। भूमि के जिस भाग पर हम रहते हैं वह सम्पूर्ण पृथ्वी का मात्र 29% है और बाकी का 71% भाग पानी है। महासागरों के इस पानी में भोजन, ऊर्जा और प्राकृतिक सम्पदाओं के असीमित भंडार छुपे हैं। समुद्र से मछली पकड़ना और यातायात का प्रचलन बहुत पुराना है। इस समय ऐसी विधियों का विकास हो चुका है जो इसी पानी (समुद्र के खारे पानी को) को पीने योग्य पानी बना देती हैं। लहरों की शक्ति से बिजली पैदा की जा सकती है और समुद्र में बिखरे खनिज भंडारों का उपयोग वर्षों तक किया जा सकता है।

इन महासागरों की 3500 लाख घन मील की विपुल जलराशि स्वयं में एक विस्तृत खनिज भंडार है। इस जल के प्रत्येक दस लाख भाग में लगभग 35,000 भाग खनिज लवण घुले हैं। इन लवणों को यदि पानी से निकालकर

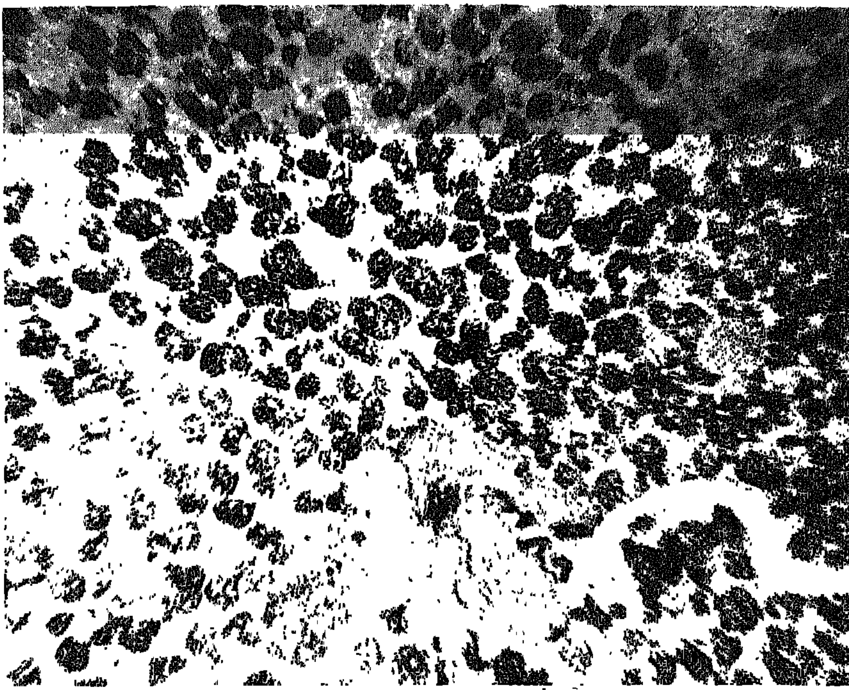
सुखाया जाए तो सम्पूर्ण ज़मीन पर लगभग 15 वर्ग मीटर मोटी तह बिछ जायेगी। **महाद्वीपीय शेल्फ** (Continental Shelf) पर बालू, खनिज, तेल, इमारती पत्थर, कोयला, हीरे, मूंगा (Coral), प्लेसर खनिज तथा फास्फोराइट जैसे अनेकों खनिज बिखरे हुए हैं। कभी-कभी इन खनिजों का समुद्र की ओर विस्तार भूमि पर इनके समस्त विस्तार से भी अधिक होता है। ज़्यादा गहरे समुद्र में **हाइड्रोथर्मल भंडार** (Hydrothermal Deposits) तथा **बहुधात्विक पिंड*** (Polymetallic Nodules) महत्त्वपूर्ण खनिज भंडार हैं।

ये बहुधात्विक पिण्ड कभी-कभी नदियों, बड़ी झीलों और कम गहरे सागर में भी मिलते हैं। गहरे महासागरों में यह तल की ऊपरी सतह पर चटाई की तरह फैले हैं (चित्र 1)। इन पिंडों में निकिल, कोबाल्ट, तांबा, मैंगनीज़ एवं लोहा जैसी अनेकों धातुएं हैं जिनका खनन सम्भव है। गोवा स्थित **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान** के वैज्ञानिकों ने हिंद महासागर के मध्य क्षेत्र (Central Indian Ocean Basin) में लगभग 5000 मीटर गहरे पानी तले इन पिंडों से भरी एक खान की खोज की है। उनकी इस उपलब्धि के लिए **अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र तल प्राधिकरण** (International Seabed Authority) ने भारत देश को ***प्रथम पूंजी निवेशक*** (Pioneer Investor) की उपाधि से सम्मानित किया है। अमरीका, जापान, कनाडा और सोवियत संघ के बाद भारत को इस सम्मान का गौरव मिला है। बहुत से देशों ने इन बहुधात्विक पिंडों को भविष्य का एक उद्योग मान लिया है।

**बहुधात्विक पिंडों की खोज :** इन पिंडों की गहरे समुद्र में खोज का श्रेय 1872–76 में हुए **चैलेन्जर** अभियान को जाता है। यद्यपि इस अभियान में किसी भूवैज्ञानिक ने भाग नहीं लिया था। 7 मार्च, 1873 को गहन समुद्र में जब ड्रेज द्वारा तलीय नमूने एकत्र किये जा रहे थे, यह ड्रेज बहुधात्विक पिंडों से भरा हुआ वापस लौटा। दल के वैज्ञानिकों के अनुसार *"अनेकों अद्भुत, एक इंच लम्बी, काली, अण्डाकार चीजें लेकर"* जिन्हें जाँच के बाद

---

*इन बहुधात्विक पिंडों को मैगनीज़ नोड्यूल, फेरोमैगनीज नोड्यूल्स तथा पौलीमेटैलिक कंकरीशन्स आदि नाम से भी जाना जाता है।



**चित्र** 1. गहरे समुद्र मे बहुधात्विक पिडों का विस्तार, नीचे मिट्टी मे धंसा लट्टू (गहराई 5000 मीटर)।

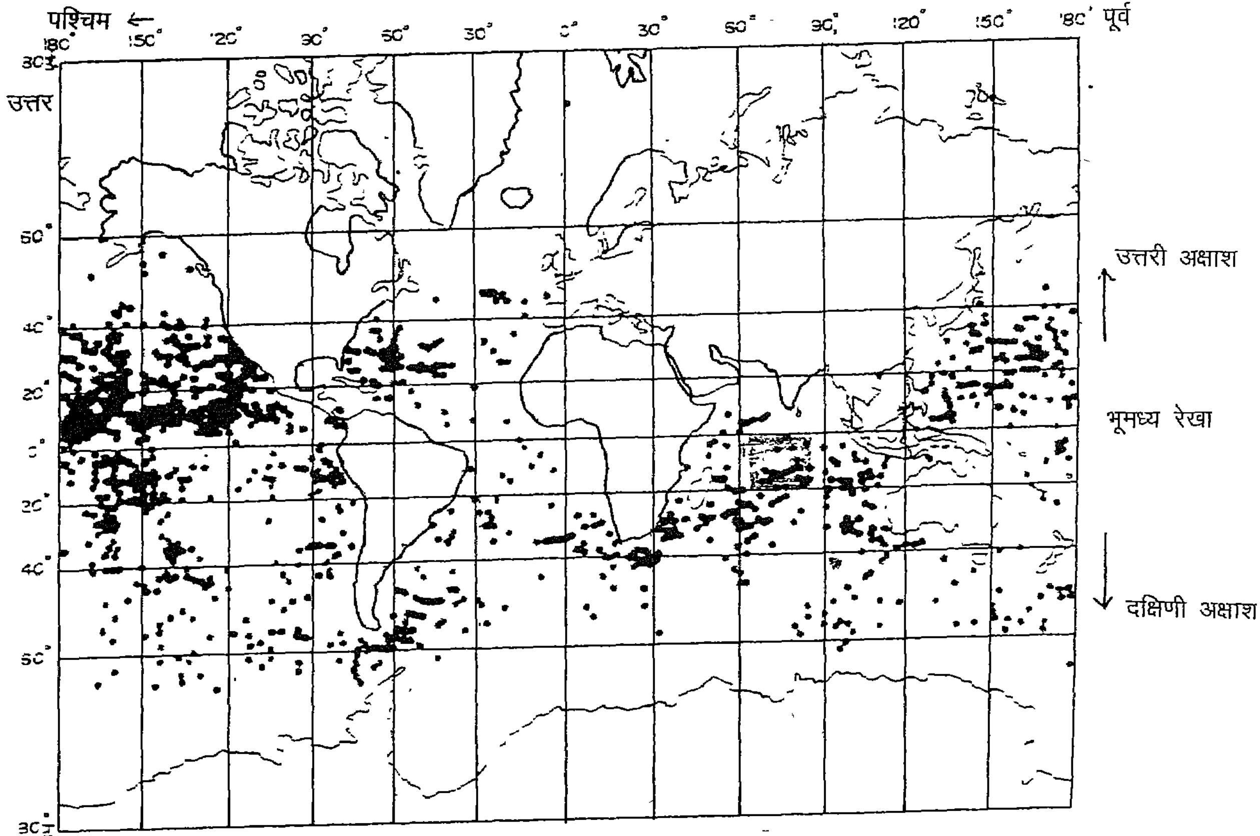
मैंगनीज़ का बाहुल्य होने के कारण **मैगनीज़ पिंड** (Manganese Nodules) की संज्ञा दी गई। दल के रसायनशास्त्री ने अपने पिता को पत्र में लिखा कि *मैंगनीज़ आर्थिक दृष्टि से एक बहुत महत्त्वपूर्ण खनिज है। यद्यपि इतने गहरे समुद्र से मैंगनीज निकालने की संभावना अभी कम है परन्तु इनकी उपस्थिति भविष्य में कभी भूविज्ञान के क्षेत्र में ज़रूर ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकेगी।*

सन् 1965 में जे.एल. मेरो नामक वैज्ञानिक ने इन पिंडों का आर्थिक पहलू उजागर करते हुए सभी की दृष्टि इस ओर आकर्षित की। उसने लिखा कि *समुद्र में उपस्थित इन पिंडों के कुल संग्रह (Total Deposit) का केवल 10% भी खनन की दृष्टि से लाभकारी हो तब भी इनमें उपस्थित धातुऐं*

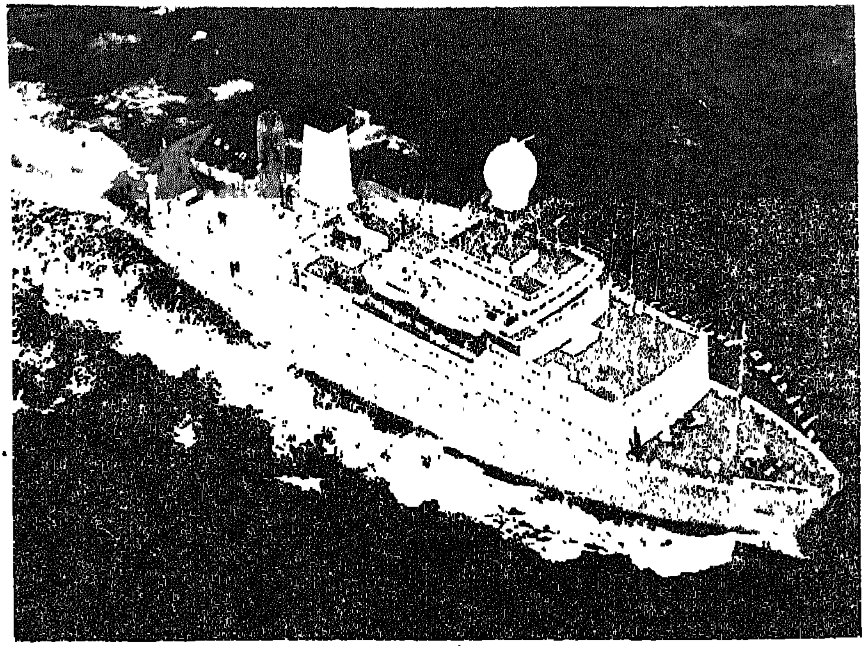
*हमारे लिए हज़ारों साल तक उपलब्ध हो सकेंगी।* मेरो ने कहा कि *जिस तरह इस समय किनारे से बालू खोदना सम्भव है, उसी तरह कुछ सालों बाद हज़ारों मीटर गहराई से खनिज खोदना और लगभग 20 वर्षों बाद गहन समुद्र (औसत 4500 मीटर) से इन पिंडों का खनन सम्भव हो सकेगा।* कुछ लोगों ने मेरो का मज़ाक बनाया कि *आँधी-तूफान के बीच फुटपाथ पर कटोरे में दूध रखा है और मेरो 20 मंजिला इमारत की छत पर खड़े होकर पतले पाइप से उसे पीने की बात कर रहे हैं।* सच है कि उस समय समुद्र की अथाह गहराई, पानी का भीषण दबाव एवं धाराओं के बीच से पिंडों के खनन की बात सोचना कुछ ऐसा ही प्रतीत होता होगा परन्तु गहरे सागर का उत्खनन धीरे-धीरे एक सच्चाई बनकर सामने आ रही है।

आरम्भ में लोगों को संदेह था कि गहरे समुद्र से खनन नहीं हो सकता परन्तु अब वह सब अतीत की बातें हो गई हैं। आज समुद्री किनारों से बालू एवं बड़े इमारती पत्थरों के खनन से लेकर लगभग 100 मीटर गहराई से भारी धातुएं, सीपी, हीरे और मैंगनीज़ की खुदाई हो रही है। इतना ही नहीं, जापान के कुल कोयले का 30% भाग 2400 मीटर की गहराई से ही प्राप्त किया जा रहा है। लाल सागर में लगभग 2500 मीटर की गहराई पर लगे परीक्षण संयंत्र की सफलता ने यह सिद्ध कर दिया है कि इससे थोड़ी अधिक गहराई से धात्विक पिंडों का खनन उतना दुष्कर नहीं होगा।

भारत में भी उथले समुद्र से बालू, भारी खनिज, मूंगे तथा गहरे पानी से तेल और गैस प्राप्त करने का प्रचलन, गहरे समुद्र से खनन को प्रेरित करता है। दुर्गापुर में स्थापित **केन्द्रीय यान्त्रिक अभियान्त्रिकी अनुसंधान संस्थान,** में बहुधात्विक पिंड खनन करने की टेक्नालॉजी विकसित करने के प्रयास चल रहे हैं। इन बहुधात्विक पिंडों का खनन आर्थिक लाभ देगा या नहीं, इस प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय बहस अभी भी जारी है। संभवत. इस प्रणाली से प्राप्त धातुओं का बाज़ार मूल्य ही इस प्रश्न का अन्तिम उत्तर होगा।




चित्र 2 गहरे समुद्र सस्तर पर बहुधात्विक पिंडो (पॉलीमेटैलिक नोड्यूल्स) का विस्तार

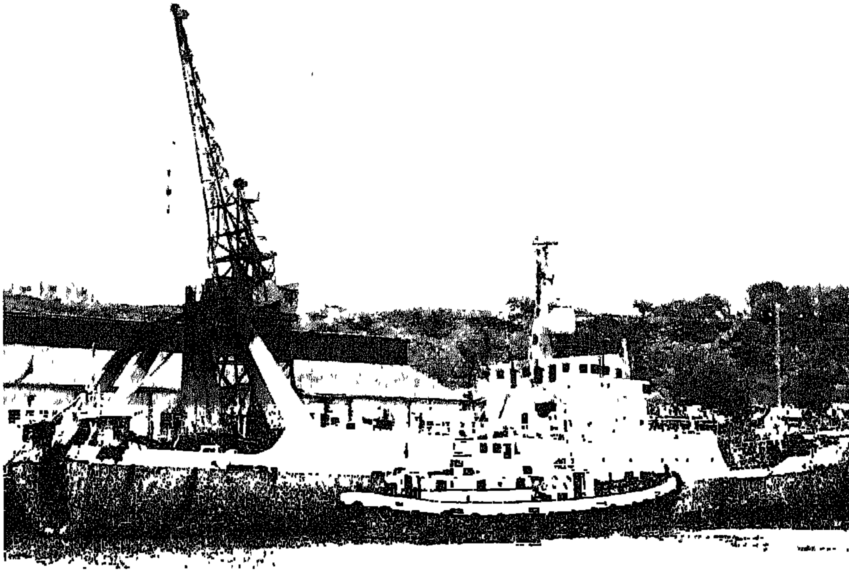


चित्र 3 (अ) समुद्र विज्ञान संबधी आधुनिक उपकरणो से सुसज्जित **सागर कन्या**। (ब) और (स) (पृष्ठ 7 पर) ब्रिटेन से किराए पर लिए गए जहाज **जी.ए.रे.** और **फरनैला**।

## हिंद महासागर में बहुधात्विक पिंड एवं भारतीय प्रयास

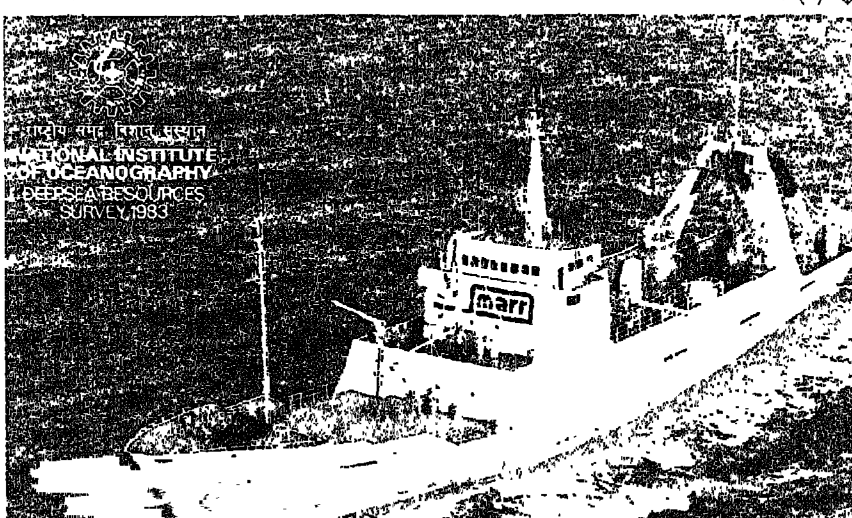
महासागरों के लगभग 460 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इन बहुधात्विक पिंडों का फैलाव है (चित्र 2) जिसमें से हिंद महासागर के 100–150 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इनके प्राप्त होने का अनुमान है। इसी अनुमान को लेकर 1977 में **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान,** गोवा के वैज्ञानिकों ने इन पिंडों के सर्वेक्षण की योजनाएँ बनानी शुरू कीं। 1980–81 में मात्र नौ व्यक्तियों के दल को लेकर कार्य आरम्भ किया गया।

1981 में जब सारा देश गणतंत्र दिवस मनाने में व्यस्त था, उसी दिन पहले भारतीय अनुसंधान जलयांन **जी.ए.रे.** (चित्र 3 ब) ने अरब सागर से



चित्र 3 (ब) ↑

चित्र 3 (स) ↓


INSTITUTE
OF OCEANOGRAPHY
DEEPSEA RESOURCES
SURVEY 1983
marr

पहला बहुधात्विक पिंड खोज निकाला। इस सफलता से उत्साहित होकर हिंद महासागर के अन्य क्षेत्रों—मुख्यतः मध्य हिंद महासागर (Central Indian Ocean Basin) में सर्वेक्षण के विस्तार एवं खनन क्षेत्र की खोज के लिये योजनाएँ बनाई गईं। 1982 में इन योजनाओं पर जोर-शोर से कार्य आरम्भ कर दिया गया। **गवेषणी** एवं **महासागर विकास विभाग** के सौजन्य से बने **सागर-कन्या** के अतिरिक्त 4 अन्य जलयान (3 विदेशी व 1 भारतीय) किराये पर लिये गए। नई नियुक्तियों के फलस्वरूप 76 वैज्ञानिकों, इन्जीनियरों एवं तकनीशियनों के दल ने इस योजना पर काम करना शुरू किया। इतना ही नहीं, अब तक देश के लगभग 40 अन्य संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों ने सर्वेक्षण, रासायनिक जाँच, धातु कर्म, खनन संयंत्रों का विकास व भंडारों का मूल्यांकन आदि विभिन्न चरणों में इस बहुमुखी योजना को सफल बनाने में सहयोग दिया है।

# 2

# महासागरों का निर्माण और मनुष्य से रिश्ता

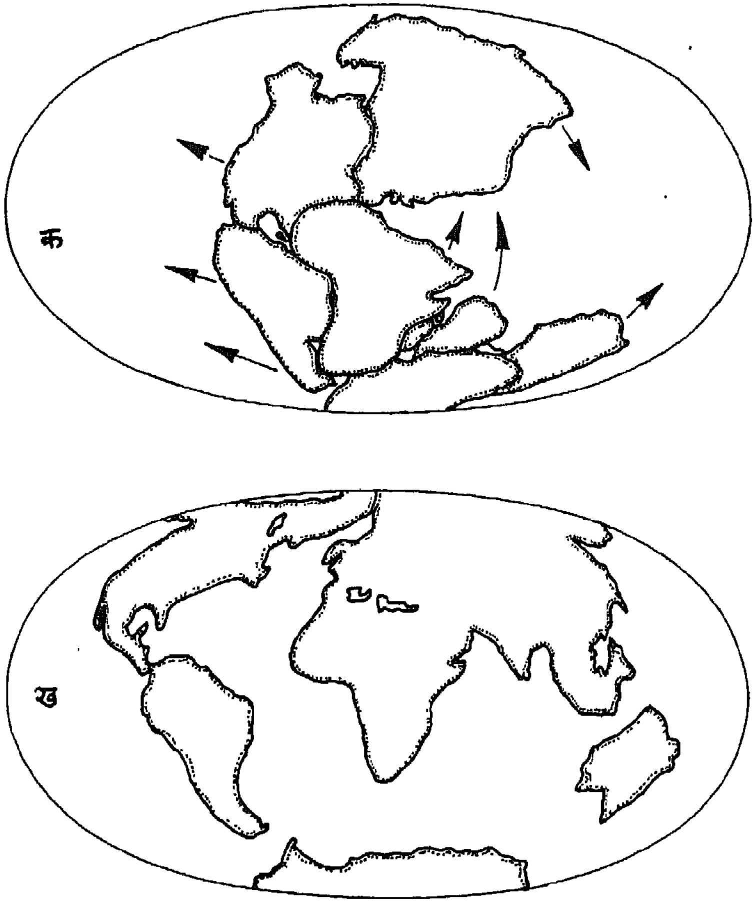
लगभग साढ़े चार अरब वर्ष पूर्व गैस और अंतरिक्ष धूल (Cosmic dust) के गुबार का एक गोला अंतरिक्ष में दहक रहा था। आग का यह गोला पृथ्वी थी, कहते हैं इसके निर्माण में सौ से एक हज़ार वर्ष लग गये। इसी समय कई अन्य ग्रहों का निर्माण भी हो रहा था। ग्रहों की भयंकर टक्कर के कारण पृथ्वी का केन्द्र आरम्भ में बहुत गर्म था, जिसने धीरे-धीरे ठंडा होना शुरू कर दिया। संभवतः पहले पिघले तरल पदार्थ के रूप में। बाद में इस तरल पदार्थ का पृथक्करण (Separation) शुरू हुआ जिसने पृथ्वी की संरचना को तीन भागों में बनाया। सबसे भारी पदार्थ जैसे लौह धातुएं ग्रह के केन्द्र (Core) की तरफ डूब गई। इस केन्द्र के भी 2 भाग हुए। अन्दरूनी ठोस भाग (1270 किलोमीटर मोटा) तथा बाहरी भाग (2200 किलोमीटर मोटा) तरल था। इस केन्द्र के चारों ओर 2870 किलोमीटर मोटी पिघली चट्टानों की दूसरी तह बनी जिसे मैंटल (Mantle) के नाम से जाना जाता है। सबसे बाहरी सतह प्याज़ के छिलके जैसी पतली सिर्फ 0–30 किलोमीटर मोटी बनी जिस पर हम लोग रहते हैं। ऐसा कहते हैं कि सबसे पहले इसी पतली बाह्य ठोस सतह (Crust) का निर्माण हुआ जो तरल मैंटल पर तैरती थी। मैंटल के धीरे-धीरे ठंडा होने के साथ असीमित गैसें और भाप ऊपर वातावरण (Atmosphere) में समाहित होने लगीं। जब पृथ्वी की सतह इतनी ठंडी हो गई कि उसने उबलना बन्द कर दिया तब वर्षा होनी शुरू हुई और बहुत बड़े बेसिन (Basin) में भर गई। इस तरह महासागरों का निर्माण हुआ।

कुछ वैज्ञानिकों का अनुमान है कि टकराव के कारण पृथ्वी के गैसीय तत्वों ने निकलकर वाष्प का वातावरण बनाया होगा जो बाद में बरस कर समुद्र बना। सारांश यह कि पृथ्वी के निर्माण के समय ही एक वातावरण मौजूद था जिसमें नाइट्रोजन ($N_2$), कार्बन डाई ऑक्साइड ($CO_2$), तथा जल वाष्प ($H_2O$), पहले से ही मौजूद थे। ये पदार्थ 4.5 करोड़ वर्ष पूर्व ऑक्सीकृत होकर, या वर्षा द्वारा समुद्री पानी बने।

वास्तव में सम्पूर्ण संसार में केवल एक ही महासागर है, क्योंकि आज के पाँचों महासागरों का तला पानी के अंदर आपस में जुड़ा है जिनके ऊपर पानी है। सभी महाद्वीप इस पानी पर तैरते हुए **द्वीप समूह** (Islands) जैसे हैं जो इस विशाल जलराशि को अलग-अलग महासागरों में विभाजित कर देते हैं। पृथ्वी पर एक स्थान ऐसा भी है जहाँ पर सारा पानी आपस में मिल जाता है। 40° एवं 60° दक्षिण अक्षांश के पास दक्षिणी ध्रुव (अंटार्कटिका) के समीप, दक्षिण अमरीका महाद्वीप के दक्षिणी किनारे की 2% ज़मीन के अलावा बाकी 98% भाग पानी है। इस स्थान से ही सारे महासागर अटलांटिक, हिंद और प्रशांत महासागरों में विभक्त हो जाते हैं।

इन महासागरों के निर्माण का इतिहास बहुत ही रोमांचकारी है। भूविज्ञान में इसे **महाद्वीपीय विखण्डन** (Continental Drift) कहते हैं। आज से लगभग दो हज़ार लाख वर्ष पहले सभी महाद्वीप एक साथ जुड़े थे। इन्हें **पैंजिया**

> चलते-चलते एक से यू ही पूछ लिया : समुद्र में इतना पानी कहाँ से, कैसे आ गया कुछ पता है? 'भगवान ने दिया' जबाव था। जिसे पता नहीं उसने भगवान की देन समझा, जिसे पता है उसने प्रकृति की देन समझा। एक बिन्दु पर प्रकृति और ईश्वर एक ही तो हैं। जब ईश्वर गुस्सा हो जायेगा तब प्रलय आ जायेगी, जब मनुष्य प्रकृति को विकृत कर देगा तब भी प्रलय आयेगी।




चित्र 4 - क : पैंजिया– 2000 लाख वर्ष पूर्व। महाद्वीपो का खंडित होकर तीरों की दिशा में धीमी गति से चलना और (ख) आज की स्थिति।

(Pangaea) के नाम से जाना जाता था। इन महाद्वीपों के चारों ओर **टेथीस** (Tethys) नामक महासागर था। मध्य महासागर पर्वतमालाओं को फोड़कर पृथ्वी के गर्भ से मैग्मा ऊपर निकलता और पुरानी तहों को परे खिसका देता। निरन्तर चलती इस क्रिया के फलस्वरूप समुद्र तल फैलकर बढ़ने

लगा। परिणामस्वरूप, एक साथ जुडे महाद्वीप, पैंजिया की कमज़ोर सतहों से खण्डित होकर अलग-अलग दिशाओं में मंद गति से चलने लगे (Drifting) (चित्र 4)। लगभग दो सौ लाख वर्ष तक **ड्रिफ्ट** होने के बाद, अर्थात् लगभग अट्ठारह सौ लाख साल पहले इन महाद्वीपों का उत्तरी भाग—**लॉरेशिया**, दक्षिणी भाग **गोंडवाना** से खंडित हो गया। बाद में गोंडवाना उपमहाद्वीप ने भी खंडित होना आरंभ कर दिया। इस समस्त क्रिया के फलस्वरूप "Y" आकार के रिफ्ट द्वारा भारत अलग हो गया और अफ्रीका एवं दक्षिणी अमरीका, अंटार्कटिका व ऑस्ट्रेलिया से अलग हो गये। करीब 650 लाख वर्ष तक ड्रिफ्ट होने के बाद (1350 लाख वर्ष पूर्व) **जुरैसिक काल** (Jurassic Era) में, महाद्वीपों के काफी फैल जाने के फलस्वरूप उत्तरी अटलांटिक एवं हिंद महासागर का जन्म हुआ। इसी तरह लगभग 1350 लाख वर्ष तक खिसकने के बाद यानी 650 लाख वर्ष पहले **क्रिटेशियस** (Cretaceous) के अंत तक दक्षिण अटलांटिक महासागर एक बडे महासागर के रूप में उभरने लगा। समुद्र तल के फैलने से भूमि में दबाव और टकराव के कारण हिमालय जैसी पर्वत श्रृंखलाओं का जन्म हुआ जो तल के फैलने के साथ अभी भी ऊपर उठ रही हैं।

ऊपर से शांत दिखने वाले इस नीले विशाल महासागर का सारा पानी निकालकर देखें (चित्र 5) तो समुद्र तल पर पृथ्वी की ही तरह, हिमालय पर्वत से भी बेहद ऊँचे शिखरों वाली हजारों पर्वत श्रृंखलाएं दिखाई देंगी। इतनी गहरी खाइयाँ कि एवरेस्ट जैसा पर्वत शिखर भी डूब जाय तो उसका पता न लगे। सहारा रेगिस्तान से दस गुने आकार के **लाल मिट्टी** (Red Clay) के समतल मैदान, कहीं पर दहकते दावानल से ज्वालामुखी तो कहीं हरे-भरे **सूक्ष्म पादपों** (Phytoplankton) के जंगल। **एक कोशीय** (Unicellular) प्राणियों से लेकर **उभयधर्मी** एवं **स्तनधारी** (Mammals) प्राणियों के विकास का इतिहास संजोये हैं ये महासागर।



**चित्र 5 :** शांत समुद्र के गर्भ में समाई हजारों पर्वत शृंखलाएँ, खाइयाँ और समतल मैदान। **(फोटो** · *हीजन और थार्प)*

संसार का सबसे गहरा स्थल हो या सबसे ऊँचा—उसका स्थान भी समुद्र में ही है। ब्रिटिश ज़हाज़ **एच.एम.एस.कुक** ने 6 नवम्बर 1962 को सबसे गहरी समझी जाने वाली प्रशांत महासागर की मैरियाना खाई (लगभग 11,000 मीटर गहरी) से भी 457 मीटर और गहरा स्थान (11516 मीटर गहरा) फिलीपीन्स खाई में खोज निकाला। इसी तरह संसार की सबसे बड़ी पर्वत शृंखला, **मिड अटलांटिक रिज** (Mid Atlantic Ridge) का एक भाग है। यह भूकम्पों एवं ज्वालामुखियों का केन्द्र भी रही है। समुद्र के भीतर ऐसी न जाने कितनी ही आश्चर्यजनक संरचनाएँ हैं। कुछ ऐसे पर्वत शिखर **गायोट्स** (Guyots) हैं जिन्हें समुद्री धाराओं ने काटकर फुटबाल के मैदान जैसा

समतल बना दिया है। भारत में मद्रास के ट्रिन्कोमलैइ से 20 मील दक्षिण में जहाँ पर श्रीलंका, बंगाल की खाड़ी से मिलता है, 18 मील से भी कम दूरी पर समुद्र तल 55 मीटर से एकदम 3657 मीटर गहरा हो उठता है। संभवतः यह स्थान संसार का सबसे ढलाव वाला स्लोप (Steepest Slope) है। महासागर के पानी की ऊपरी सतह चाहे बहुत गर्म हो या बर्फ जैसी ठंडी, तल के पास पानी का तापमान हर जगह हमेशा 37.4° फारेनहाइट ही रहता है। जबकि पानी का दबाव प्रत्येक 10 मीटर पर 1° एटमॉसफियर बढ़ जाता है और बढ़ते हुए 4000–6000 मीटर तक बहुत अधिक हो जाता है।

पानी का खारापन या लवणता {100 ग्राम पानी में घुले नमक (लवणों) की मात्रा की सूचक है} नदियों के मुहाने पर सामान्यतः बहुत कम होती है और लाल सागर में अधिकतम (40%)। अटलांटिक महासागर की लवणता (34.92%), प्रशान्त महासागर (34.62%), या हिन्द महासागर (34.76%) की तुलना में सबसे अधिक है जो वाष्पीकरण एवं अवक्षेपण के अन्तर पर निर्भर करती है।

**समुद्री जीवन :** सब वैज्ञानिक अब इस बात पर सहमत हैं कि जीवन की शृष्टि अमीनों एसिड (जो जीवन के आधार–प्रोटीन की मूल इकाई है) की आपसी अभिक्रियाओं द्वारा समुद्र में हुई। यह समुद्र के कम गहरे स्थानों से होती हुई थल तक आ पहुँची। इस बात की विस्तृत विवेचना डार्विन नामक वैज्ञानिक ने 1859 में सुझायी थी।

समुद्र का जीवन पृथ्वी से अधिक रोमांचकारी, विविध और विस्तृत है। यहाँ पर अतिसूक्ष्म पादपों (Picoplankton) से लेकर हाथी से कई गुनी बड़ी ह्वेल रहती हैं। थल पर पाये जाने वाले सभी जीवों के विषय में लगभग सभी बातें ज्ञात हो चुकी हैं, परन्तु समुद्र में हमेशा नई-नई जातियाँ निकलती रहती हैं। एक ही स्थान पर रहने वाले जानवरों का स्वभाव कितना भिन्न हो जाता है। उदाहरण के लिए शार्क मछली की कुछ प्रजातियों को छोड़कर बाकी को

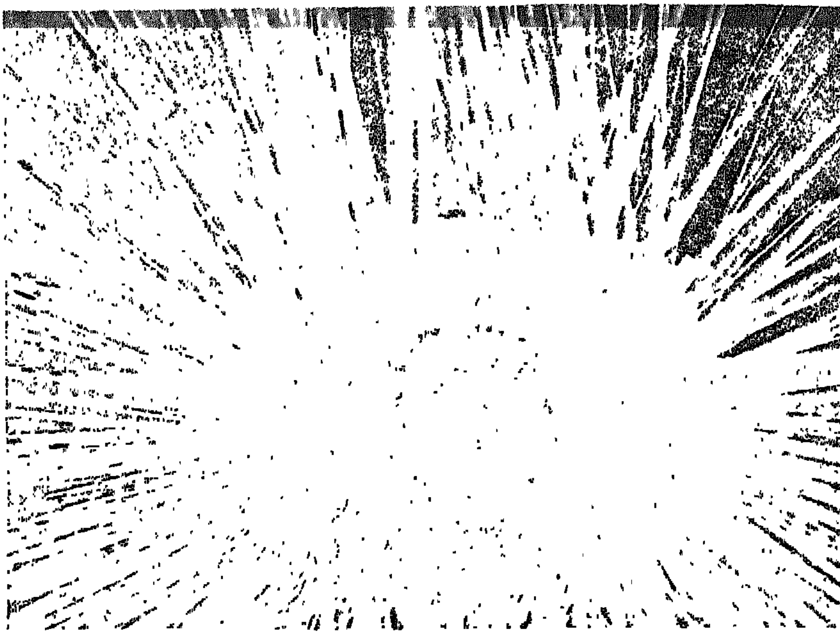
भूख लगे तो जबडों के बीच मछली या मनुष्य किसी का कंकाल भी न बचे। वहीं दूसरी ओर डालफिन (ह्वेल की प्रजाति) के डूबे नाविकों को रास्ता दिखाने के किस्से, मनुष्यों से मित्रता भी सच ही है।

तट के समीप कम गहरे क्षेत्रों में जहाँ तक सूर्य का प्रकाश पहुँचता है, जीवन सबसे सघन होता है। यहाँ पर अनगिनत पादप प्लवक (चित्र 6), रेडियोलेरिया, फोरामिनीफेरा, कॉपीपोड, विशाल जैलीफिश मछलियॉ आदि मिलती हैं (चित्र 7 क,ख,ग,घ,ड़)। सागर की मध्यवर्ती सतहों में क्रमशः मद्धिम होते प्रकाश में ऑक्टोपस, स्क्विड, एन्गलरफिश जैसी बडी जातियॉ भी दिखाई देती हैं। तलीय गहराइयों के अंधकार तक जाते-जाते जीव जन्तुओं की दुनिया काफी बदल जाती है। यहाँ पर केवल ग्लास स्पांज, समुद्री लिली (क्रिन्वायड), लैम्प शेल, सी क्युकुम्बर (होलोथूरियन्स) (चित्र 8) जैसी जातियॉ किन्हीं चट्टानों पर चिपकी या बिल बनाकर रहती हुई मिलती हैं।

कई जन्तु जैसे आस्ट्रोकॉड और कुछ मछलियॉ भी जुगनू जैसी चमक रखती हैं (Bioluminescence)। इसका एक मनोरंजक वर्णन द्वितीय विश्वयुद्ध



**चित्र 6 : जैवीय भूमंडल :** कृत्रिम उपग्रह द्वारा नुवम्बर 1978 से जून 1981 के बीच बनाया गया सयुक्त चित्र, पानी के विभिन्न रग उसमे उपस्थित अनगिनत सूक्ष्म पादप प्लवक मे क्लोरोफिल की उपस्थिति दर्शाते हैं। (**फोटो** : *नासा*)



चित्र 7 : रगीन समुद्री जीवन की एक झलक (क) भव्य सीअरचिन (एस्ट्रोपाइगा मैग्नीफीसा)

के समय मिलता है। जापानी लोग **साइप्रिन्डिना** (Cyprindina) नामक जन्तु को पकड़कर सुखाकर उसका पावडर बनाकर अपने साथ ले जाते थे। रात के समय इसमें थोडा पानी डालने पर इसमें मद्धिम प्रकाश हो उठता, जिससे वे संदेश-पत्र, मानचित्र आदि पढा करते थे।

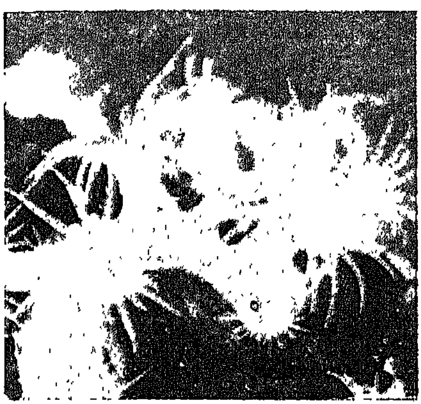
**समुद्र का पानी नीला क्यों? :** तटीय क्षेत्रों में सूक्ष्म पौधों के कारण पानी हल्का हरा और गहरे समुद्र मे गहरा नीला दिखाई देता है। इसी तरह नदियों के मिलने के स्थान पर मिट्टी के कारण पानी गंदला, सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय लाल व घने काले बादलो तले अपने वास्तविक रंग से थोड़ा गहरा दिखाई देता है। पौधे, मिट्टी, मौसम आदि कारक पानी पर पडने वाले प्रकाश और अंततः इसके रग को प्रभावित करते हैं। सुदूर खुले समुद्र का गाढा नीला पानी हाथ में लेने पर रंगहीन साधारण पानी जैसा ही क्यों दिखाई देता



चित्र 7 : (ख) ब्रिटिल स्टार *(औफियोथ्रिक्स सुयेनसोनायी)*



चित्र 7 : (ग) ब्रिटिल स्टार *(औफियोथ्रिक्स ओफियोडर्मा व अन्य जन्तु)*



चित्र 7 : (घ) चट्टानो पर चिपके वर्म



चित्र 7 : (ड) ट्यूब बिल्डिग फैन वर्म *(सवेला मेलेनोस्टिग्मा)*

है ? वर्षो तक यहं प्रश्न लोगों के मन में कौतूहल पैदा करता रहा। लोग विश्वास करने लगे थे कि आकाश की परछाई समुद्र में पड़ने के कारण ऐसा होता है। इसी समय नोबेल पुरस्कार विजेता महान् भारतीय वैज्ञानिक श्री सी. वी. रमण ने बताया कि पानी के अणुओं (Molecule) द्वारा प्रकाश की स्कैटरिंग (Scattering of Light) के कारण ऐसा होता है।

## महासागर और मनुष्य :

महासागरों का मनुष्य जीवन पर सदियों से व्यापक प्रभाव रहा है। पुरातत्व की खुदाई में प्राप्त **पैलियोलिथिक आदि मानव** द्वारा लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व प्रयोग की गयी मछलियों की हड्डियों के अंश एवं नार्वे की चट्टानों पर खुदी **नियोलिथिक आदि मानव** द्वारा प्रयुक्त नावें, मछली पकड़ने के हुक व जाल, पाषाण युग से ही समुद्र से मनुष्य के रिश्ते की कथा कहते हैं।

संभवतः मछली पकड़ने से ही प्रारंभ हुआ यह रिश्ता। फिर चल निकला यातायात का सिलसिला–लकड़ी के तख्तों पर सवार होकर समुद्री प्रवाह के

समुद्री जीवन बहुत ही विचित्र और रहस्यमय होता है। शार्क के बारे मे यह विख्यात है कि उसके जबडों के बीच आ जाने पर कंकाल तक नहीं बचता। वहीं दूसरी ओर डालफिन (व्हेल की एक प्रजाति) के स्नेहमय स्वभाव का वर्णन सदियों से लोग करते रहे हैं। ग्रीक दार्शनिक अरस्तू के अनुसार "डालफिन अपने दयालु और सरल स्वभाव के कारण बच्चों की स्नेह-पात्र होती है। रोम के इतिहासकार लिनी (Pliny) ने ल्यूक्रीन झील में लाई गई एक डालफिन का वर्णन किया है। कहते हैं कि यह डालफिन एक गरीब लडके की गहरी दोस्त बन गई थी। जब भी लड़का डालफिन को आवाज़ देता, वह किनारे पर आ जाती। कभी-कभी वह लड़के को पीठ पर बैठाकर झील के दूसरे किनारे पर उसके स्कूल तक पहुँचा देती और वापस ले आती। एक दिन लड़का बीमार पडा और मर गया। डालफिन रोज लड़के की पुकार का इंतजार करते-करते एक दिन खुद भी मर गई। महासागरों में भटके हुए नाविकों को डालफिन द्वारा रास्ता दिखाने के कई संदर्भ पुराने वर्णनों में मिलते है।

ग्रीक कवि आप्पियन (Oppian) ने लिखा है कि डालफिन का शिकार अधर्म है। जो इस मछली का शिकार कर सकता है वह अपने बच्चो, पिता, भाइयों को भी नहीं छोड़ेगा। मैलागासी गणतंत्र में अभी भी लोग डालफिन को पूज्य मानकर उसकी रक्षा करते हैं।



चित्र 8 : सी क्युकुकुम्बर *(होलोथूरियन्स)* की प्रजाति– होलोथूरिया ट्राईकलर

साथ बहते हुए जाने का। लकड़ी के ये तख्ते कैसे जुड़कर बड़े बने, छोटी नावों, पाल की नावों, छोटे ज़हाज़ से होते हुए अंततः बड़े विशालकाय ज़हाज़ तक, यह बेहद रोमांचकारी सफर की कहानी है।

मछली पकड़ने और यातायात के साथ-साथ शुरु हुआ सागर के अन्य पहलुओं को जानने का सिलसिला। आरंभ में समुद्र के खारेपन को लेकर यूनान और रोम के दार्शनिकों द्वारा। फिर पहली शताब्दी के आसपास कभी धाराओं, कभी लहरों एवं समुद्री जन्तुओं का अध ययन आरम्भ हुआ। इस अध्ययन में मनुष्य जितना गहरे उतरता गया सागर के उतने ही रहस्य एक के बाद एक खुलकर उसके सामने आते गए। हमारे पूर्वजों के पास इस ज्ञान को संकलित करने के उचित साधन न होने के कारण समय की धारा में यह ज्ञान एक तरह से विलुप्त हो गया।

फिर समुद्री सर्वेक्षण का स्वर्णिम युग पंद्रहवीं शताब्दी के आसपास शुरू हुआ। पुर्तगाली नाविक इन समुद्री यात्राओं में काफी आगे निकल गए थे। क्रिस्टोफर कोलम्बस द्वारा 1492 में नई दुनिया (अमरीका) की खोज से प्रभावित होकर वास्कोडिगामा, 1497 में, आशा अन्तरीप का चक्कर लगाता

हुआ 1498 में भारत के मालाबार तट पर पहुँचा। उसकी इस यात्रा ने भारत के साथ व्यापार संपर्क का एक नया रास्ता खोला। इसी प्रकार मैगलेन ने अगली शताब्दी में स्पेन से चलकर बहुत लम्बी समुद्री यात्राएं कीं। मैगलेन ने (कोलम्बस की भांति ही) व्यक्तिगत डायरी लिखनी शुरू की थी जिससे समुद्री धाराओं के विषय में प्रारंभिक जानकारी तथा महासागरों के तले के आपस में जुड़े होने जैसी अनेकों महत्त्वपूर्ण बातें पता चल सकीं। मैगलेन समुद्र की गहराई नापने का असफल प्रयास करता रहा। दुर्भाग्यवश सन् 1521 में फिलीपीन्स के आदिवासियों ने उसकी हत्या कर दी जिससे उसकी यात्रा पूरी न हो सकी। कैप्टेन जैम्स कुक की प्रशांत महासागर की यात्राओं (1768–1779) ने ज्वारभाटाओं (Tides), समुद्री धारांओं (Ocean Currents), के विषय में बहुत जानकारी एकत्र की। अमरीका में पोस्ट ऑफिस में काम करने वाले बेंजामिन फ्रैंकलिन ने चिट्ठियाँ जल्दी पहुँचाने का उपाय सोचते-सोचते गल्फ स्ट्रीम की खोज की। सारांश यह है कि शनैः शनैः किये गए प्रयासों से समुद्र के रहस्य लोगों के सामने खुलते गए।

> किंवदंती है कि कैप्टेन एडवर्ड डेविस नामक एक समुद्री डाकू था। वह डाके तो डालता था परन्तु किसी को मारता नहीं था। एक दिन वह डाके डालते डालते उब गया। उसने राजा को घूस दी और राजा ने उसे माफ कर दिया। अब वह एक सभ्य आदमी की ज़िन्दगी जीने लगा। अपने साथ वह पर्याप्त सम्पत्ति ले आया था। डाके डाल-डाल कर वह सारा ख़ज़ाना हिंद महासागर में एक जगह इकट्ठा करता था। सभ्य आदमी बनने के बाद इस फेंकी सम्पत्ति को दुबारा वापस लाने की फिर उसे इच्छा ही नहीं हुई। अतः तब से अबतक यह खजाना वहीं पडा है। हज़ारों लोग उसे निकालने का असफल प्रयास कर चुके हैं। कहानी है कि मानचित्र पर श्रीलंका के कोलम्बो स्थान से आस्ट्रेलिया के फ्रीमैंनटेल स्थान पर रेखा खींचें (भूमध्य रेखा से लगभग 12° दक्षिण पर) तो इस "x" बिंदु पर यह विशाल ख़ज़ाना पडा मिलेगा।

महासागरों के विज्ञान का वास्तविक आरम्भ 1830 से 1840 के बीच कहा जा सकता है। इस समय फ्रांस और अमरीका के कई ज़हाज़ों ने समुद्री यात्राएँ कीं परन्तु इन अभियानों के परिणामों का कभी सही उपयोग न हो सका।

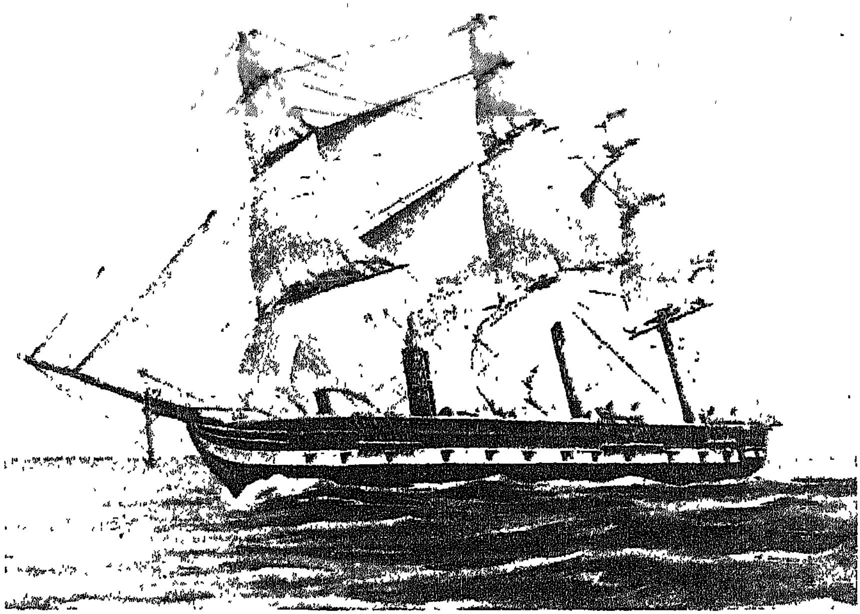
इन अभियानों में 1868 में **लाइटनिंग** एवं 1869 मे **एच.एम.पार्क्यूपाइन** जलयानों का अभियान समुद्र विज्ञान के इतिहास में प्रारंभिक सफलता कही जा .सकती है, जिनसे प्रभावित होकर सन् 1872 में ब्रिटिश नौसेना के 69 मीटर लम्बे जलयान **एच.एम.एस. चैलेन्जर** (चित्र 9) को गहरे समुद्री अध्ययन के लिये भेजना सुनिश्चित किया गया। अभियान की समाप्ति पर चैलेन्ज़र एक अद्‌भुत कार्गो (Cargo) लेकर वापस लौटा। सोना, मसाले, तम्बाकू, आयवरी की जगह पानी, तलीय मिट्टी व जैवीय नमूने (मछली, शैवाल आदि)

हर सभ्यता में पूर्वजो ने विरासत मे दूसरी पीढ़ी के लिये लोक-कथाओं, किंवदंतियों आदि के रूप में ज्ञान छोडा है। इन कहानियों में कितना सच है यह समय के साथ धीरे-धीरे सामने आता जाता है। 9000 वर्ष ईसा पूर्व पूरी तरह विकसित विशाल राज्य **अटलांटिस** का वर्णन प्लेटो द्वारा मिलता है जो एक किवदंती के अनुसार **हटासें** एक रात में ही गुम हो गया था। **अटलांटिस** पर पुरातत्व की खोज अभी भी जारी है।

ग्रीकों (यूनानियो) के मन में विश्वास था कि संसार गोल है जिसके ऊपर एक नदी बहती है जिसका रखवाला है— भगवान ओशेनस। इसी तरह यूनानियों का एक अन्य समुद्री देवता है (Poseidon), जो (उनके अनुसार) चट्टानो को तोडकर भूकम्प मचाता था और तूफान व भंवर लाता था। इस देवता की उपासना के लिये यूनानियो ने खतरनाक ऊँची-नीची चट्टानो पर मंदिर बनवाये जिनका स्थान बाद में लाइट हाउसों ने ले लिया।

इन कथाओ में बहुत कुछ सत्य है। समुद्री तूफानों, भूकम्पो, भवरो आदि का ज्ञान यूनानियों को था। परन्तु ऐसा क्यों होता है? यह पता नहीं था। जो पता नहीं, जो रहस्यमय है, जो सर्वशक्तिमान है उसे हर सभ्यता में ईश्वर मान लिया गया।

और धाराओं व तापमान से परिपूर्ण ग्रन्थ भरकर। चैलेन्जर द्वारा किये गए इस ऐतिहासिक अभियान (दिसम्बर 1872–मई 1876) ने लगभग 68890 समुद्री मील की यात्रा द्वारा 1400 लाख वर्ग मीटर के क्षेत्र में आंकडे एकत्र करके समुद्र विज्ञान अध्ययन की आधारशिला रखी।



**चित्र 9 : ब्रिटिश नौसेना का एतिहासिक जलयान—एच.एम.एस. चैलेंजर जिसकी अभियान यात्रा (1873-1876) गहरे समुद्री अभियान की आधारशिला बनी।**

लम्बी समुद्री यात्र के बाद कोलम्बस ने पाया कि पृथ्वी गोल है। उससे पहले तक लोगों का विश्वास था कि पृथ्वी चपटी है।

समुद्र तट पर खड़े होकर किसी ज़हाज को जाते हुए देखो तो लगता है कि वह दूर क्षितिज में पानी में डूबा जा रहा है, वास्तव में ऐसा नहीं होता। यह तो पृथ्वी के आकार के कारण लगता है।

इसी समय ब्रिटिश अंटार्कटिका अभियान अपनी पराकाष्ठा पर था जिसके सामने चैलेन्जर द्वारा एकत्रित आंकड़ों का विशेष महत्व लोगों को उस समय तो समझ नहीं आया, परन्तु, इन विस्तृत आंकड़ों को संग्रहित कर 50 रिपोर्टों में प्रकाशित किया गया जिसमें लगभग 20 वर्ष का समय लग गया। इन रिपार्टों से इस अभियान की अद्‌भुत सफलता का संकेत मिलता है। सन् 1891 में इस अभियान के वैज्ञानिकों मरे एवं रेनार्ड ने **डीप सी डेपॉजिट** नामक अन्तिम ग्रन्थ लिखा। इस समय तक अभियान में सम्मिलित 7 में से 3 वैज्ञानिक दुनियाँ ही छोड़ चुके थे। चैलेन्जर के अभियान के बाद समुद्र विज्ञान पर फिर से निष्क्रियता छा गई, परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एक बार फिर महासागर के महत्व को अच्छी तरह समझा गया एवं कई अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों का गठन किया गया। इनमें **समुद्री शोध पर वैज्ञानिक समिति** (Scientific Committee on Ocean Research), 1931 में **अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान परिषद्** (International Council of Scientific Union) 1960 में **अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान आयोग** (International Oceanography Commission) एवं 1959–65 में **अन्तर्राष्ट्रीय हिंद महासागर अभियान** (International Indian Ocean Expedition) महत्त्वपूर्ण हैं।

## समुद्र विज्ञान अनुसंधान संस्थान की स्थापना

चैलेन्जर द्वारा समुद्र विज्ञान संबंधी अनेकानेक आंकड़े एकत्र करने के बाद समुद्र विज्ञान संस्थान की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। अमरीका में सैन डियेगो शहर के नागरिकों ने इस उद्‌देश्य के लिए चंदा एकत्रित करना शुरू कर दिया। मात्र तेरह सौ अमरीकी डालर के चंदे से **मैरीन बायोलॉजी एसोसिएशन** (Marine Biology Association) बनाया गया। यही एसोसिएशन आगे चलकर 1924 में **स्क्रिप्स इन्स्टीट्यूशन ऑफ ओशेनोग्राफी** के रूप में विकसित हुआ। अमरीका में ही बड़ी सरकारी योजनाओं एवं फन्डस से जोर-शोर से 1930 में दूसरा समुद्र विज्ञान संस्थान खोला गया।

जो अब **वुड्सहोल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीट्यूशन** के नाम से विख्यात है। इस समय ये दोनों संस्थान विश्व के समुद्र विज्ञान शोध संस्थानों में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

भारत के **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान** की स्थापना का इतिहास, **अंतर्राष्ट्रीय हिंद महासागर अभियान** से जुडता है। इस अभियान के दौरान 28 देशों के 40 जलयानों द्वारा तबतक अंजान हिंद महासागर के रहस्यों को खोलने का सम्मिलित प्रयास किया गया था। इस अभियान में भारत की ओर से शामिल शोधकर्ताओं को लेकर **वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्** (Council of Scientific and Industrial Research) के संरक्षण में **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान** (National Institute of Oceanography) की स्थापना की गई। ये शोधकर्ता उस समय के विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों से चुने गए थे। इस संस्थान का कार्यालय लगभग दो वर्ष तक दिल्ली में रहा फिर 1969 में इसे स्थाई तौर पर गोवा स्थानान्तरित कर दिया गया। इस समय एक ओर मांडोवी और दूसरी ओर ज़ुआरी नदियों के बीच घिरा और सामने अरब सागर की ओर देखता हुआ देश का एकमात्र यह संस्थान समुद्र विज्ञान अध्ययन में लगा हुआ है।

1981 में भारतीय समुद्र विज्ञान अध्ययन में तेजी लाने के लिये तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा दिल्ली में **महासागर विकास विभाग** (Department of Ocean Development) की स्थापना की गई। यह विभाग सागर अनुसंधान के विभिन्न पहलुओं को आर्थिक सहयोग देता रहा है। **बहुधात्विक पिंड योजना** के कार्यान्वयन एवं अनुदान में भी इस विभाग का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

3

# क्यों कर उपयोगी हैं बहुधात्विक पिंड

हमने पढ़ा कि दिनों-दिन बढ़ती जनसंख्या के लिये पेयजल, भोजन एवं खनिजों की अतिरिक्त मांग की पूर्ति का अन्तिम विकल्प हैं हमारे महासागर! यद्यपि पृथ्वी पर पाया जाने वाला हर खनिज पदार्थ समुद्र में मिलता है परन्तु केवल बहुतायत से प्राप्त होने वाले पदार्थों को निकालना ही आर्थिक रूप से महत्त्वपूर्ण हो सकता है। उदाहरण के लिए समुद्र से तेल खनन करने की मशीनें बहुत महँगी होती हैं परन्तु तेल की मात्रा इतनी अधिक है कि बाज़ार में तेल बेचने पर मशीन की कीमत निकालने के बाद भी लाभ ही रहता है। दूसरी ओर, यदि समुद्र से सोना निकालने की बात सोची जाए तो केवल नुकसान ही होगा क्योंकि सोने का प्रतिशत बहुत ही कम है। एक बार 1927 में जर्मनी के लोगों ने सोचा कि युद्ध के कारण उन पर जो कर्ज चढा है उसे समुद्र से सोना निकालकर उतारा जा सकता है। उन्होंने **मीटियॉर** नामक ज़हाज़ को अटलांटिक महासागर से सोना निकालने के लिए भेज दिया। परिणाम—भारी असफलता ! तात्पर्य यह कि किसी भी खनिज को निकालने के लिए पहले विस्तृत वैज्ञानिक अध्ययन कर लेना आवश्यक होता है। मसलन खनिजों की उत्पत्ति, इनका समुद्र में विस्तार तथा आर्थिक दृष्टि से विवेचन आदि।

किसी भी राष्ट्र की सीमाओं (अनन्य आर्थिक क्षेत्र या Exclusive Economic Zone) और कानूनी परिधियों से दूर गहरे समुद्र की मुख्यतः ऊपरी सतह पर चटाई की तरह बिखरे बहुधात्विक पिंड इस दृष्टि से बहुत

महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें तीस से भी अधिक संख्या में धातुओं की उपस्थिति के कारण ही इन्हें बहुधात्विक पिंडों की संज्ञा दी गई है। निकिल, कोबाल्ट, ताँबा, मैंगनीज़ और कहीं-कहीं पर मॉलिब्डेनम की आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण उपस्थिति इन्हें अति विशिष्ट खनिजों की श्रेणी में ला खड़ा करती हैं।

ये धातुएँ क्यों इतनी महत्त्वपूर्ण हैं? आइये देखें एक नज़र इन विशिष्ट 4 धातुओं के आर्थिक महत्व की ओर :

***कोबाल्ट :*** यह एक बेहद कठोर एवं भंगुर धातु है, जिसका क्वथनांक (Boiling Point) 2870°C एवं गलनांक (Melting Point) 1445°C है। अर्थात् इसमें बहुत ज़्यादा गरमी सहन कर सकने की शक्ति है। इसकी यह ऊष्मा प्रतिरोधक शक्ति, मजबूती एवं उच्च चुम्बकीय गुण इसे एक अति विशिष्ट धातु की श्रेणी में ला खड़ा करते हैं। बहुत अधिक ताप सहन कर सकने की शक्ति के कारण इसका उपयोग मुख्यतः जेट विमानों, अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण, वायुयान के पुर्जो, इलेक्ट्रानिक उद्योग तथा ड्रिलिंग मशीनों में भारी मात्रा में होता है। युद्ध में काम आने वाले यंत्रों में भी इसका उपयोग बहुतायत से होता है। इसी कारण कोबाल्ट को सामरिक खनिज (Strategic Mineral) की संज्ञा भी दी गई है।

***निकिल :*** गिलट आदि धातुओं का सम्मिश्रण बनाने में निकिल का उपयोग बहुतायत से किया जाता है। स्टील उत्पादन में भी क्रोमियम के बाद निकिल का सबसे अधिक प्रयोग होता है। इसमें निकिल के कुल उत्पादन की 75% खपत हो जाती है। बिजली द्वारा कलई करने तथा सिक्के बनाने में भी इसका उपयोग महत्त्वपूर्ण है।

***कॉपर :*** बहुत से गुणों वाली इस धातु यानी तांबे का प्रयोग विविध रूप में होता है। दैनिक जीवन में प्रयोग आने वाले बर्तनो, सिक्कों आदि में इसका प्रयोग बहुतायत से किया जाता है। कॉपर में उच्च ताप एवं वैद्युत चालकता, पीटकर पतली चादरों में ढल जाने की क्षमता, तन्यता तथा आसानी से प्रयोग किये जा सकने की विशिष्ट क्षमता होती है। इस कारण

इसका प्रयोग दूर-संचार, विद्युत उपकरणों, तारों, नलकारी, विमानों एवं यानों आदि में होता है।

***मैंगनीज़ :*** इसके कुल उत्पादन की 50% खपत स्टील उद्योग में हो जाती है। इसके साथ-साथ मैंगनीज़ का प्रयोग बैटरी, रसायन तथा धातु सम्मिश्रण बनाने में भी किया जाता है।

## तालिका 3.1

### भूमि पर इन धातुओं के कुल अनुमानित भंडार और कुल उत्पादन

(क) भारत में भूमिगत अनुमानित भडार (1991) इकाई हज़ार टन में

| *कच्ची धातु/अयस्क* | | *प्रमाणित* | *संभावित* | *संभव* | *कुल* |
|---|---|---|---|---|---|
| मैगनीज़ | | 18049 | 37788 | 98330 | 154167 |
| ताबा–अयस्क | | 83093 | 171744 | 69552 | 324389 |
| तांबा–धातु | | 798.72 | 1830.228 | 679.138 | 3308.086 |
| निकिल | (0.2–0.9%) | — | — | 231410 | 231410 |
| | (0.8–1.2%) | — | — | 240000 | 240000 |

(ख) भारत में भूमिगत कुल उत्पादन (1991) इकाई टन में

| *अयस्क/धातु* | *1986* | *1987* | *1988* | *1989* | *1990* |
|---|---|---|---|---|---|
| मैगनीज | 1284081 | 1302509 | 1355080 | 1334241 | 5293405 |
| तांबा अयस्क* | 4461862 | 5136279 | 5056263 | — | 5293405 |
| निकिल** | — | — | — | — | — |
| कोबाल्ट | — | — | — | — | — |

*(स्रोत भारतीय खान ब्यूरो, नागपुर)*

** तांबा 1.11 से 1.2% ग्रेड*

*** घाटशिला खदानों से तांबा निकालते समय उप उत्पाद के रूप मे 1987 मे लगभग 154 टन और 1988 में लगभग 227 टन निकिल धातु प्राप्त की गई।*

पृथ्वी पर निकिल, कोबाल्ट व तांबे के घटते श्रोतों (Resources) एवं बढ़ती मांग ने मानव को पानी की अथाह गहराइयों को भेदकर धात्विक पिंडों से इन धातुओं की प्राप्ति की ओर अग्रसर किया है। अपने देश भारत में ही कुल मांग का 100% कोबाल्ट और निकिल तथा तांबे की मांग का 65% आयात किंया जा रहा है क्योंकि हमारे पास इनके बहुत ही कम भंडार हैं (तालिका 3.1)। सन् 1988–89 में भारत ने 160005 टन तांबा, 10650 टन निकिल तथा 251 टन कोबाल्ट आयात किया था। पिछले दो दशक में इन धातुओं के उपयोग की दर लगभग 20% तक बढ़ी है। भविष्य में इन खनिजों की बढती मांग की पूर्ति के लिये अब अगर हम मध्य हिंद महासागर में अपने छोटे से खनन-क्षेत्र में प्रारंभिक संयंत्र लगा सकें तो 25 से 30 लाख मीट्रिक टन बहुधात्विक पिंडों से लगभग 3800 टन कोबाल्ट, 38700 टन निकिल एवं 33000 टन तांबा प्राप्त किया जा सकता है (तालिका 3.2)। जहाँ तक मैंगनीज़ का प्रश्न है, इस समय हमारे देश में भूमि पर इसके पर्याप्त भंडार हैं और हम इसका निर्यात भी करते रहे हैं। मैंगनीज़ के उपयोग की

## तालिका 3.2

**मध्य हिंद महासागर के पायनियर एरिया/आवेदन क्षेत्र में बहुधात्विक पिंडों का औसतभार, धातुमात्रा एवं कुल टनेज**

| | *कुल आवेदन क्षेत्र* | *क्षेत्र (अ)* | *क्षेत्र (ब)* |
|---|---|---|---|
| क्षेत्रफल (वर्ग किलोमीटर) | 3,00,000 | 150,000 | 150,000 |
| औसत पिंड (किलोग्राम) | | | |
| प्रति वर्ग मीटर | 4.51 | [illegible] | 4.45 |
| कुल धातु पिंड ($10^6$ टन) | 1335 | 676.5 | 658.5 |
| कुल निकिल कोबाल्ट | 21.84 | 10.88 | 10.96 |
| एवं तांबा ($10^6$ टन) | | | |

दर भी विकसित एवं उद्योगशील देशों की तुलना में अपेक्षाकृत बहुत कम है। फिर भी मैंगनीज की खपत बढ़ रही है और उत्पादन कम होता जा रहा है, जिसके कारण वर्तमान भंडार समाप्त होने में बहुत ज़्यादा समय नहीं लगेगा। ऐसी स्थिति में धात्विक पिंडों से निकिल, कोबाल्ट एवं तांबे के साथ मैंगनीज भी निकाला जा सकता है।

औसत 4500 मीटर गहराई से खनन आर्थिक दृष्टि से लाभदायक हो सकेगा, या नहीं, इस प्रश्न पर लगभग तीन दशकों से शोधार्थी अलग-अलग दृष्टिकोण से अध्ययन कर रहे हैं। कुछ का विचार है कि इन धातुओं का आयात, खनन की अपेक्षा अधिक उपयुक्त होगा। वास्तव में, धातुओं का आयात उस समय की आवश्यकता की तुरंत पूर्ति तो कर सकता है परन्तु अंतराल में उद्योग का विकास किसी भी राष्ट्र के लिए सबसे अधिक लाभदायक रहता है। इससे आयात के लिये जरूरी विदेशी मुद्रा की बचत तो होती ही है साथ ही औद्योगिक विकास एवं विशेषज्ञों की उपलब्धता (Trained Manpower) भी बनी रहती है, जिनका उपयोग अन्य उद्योगों में किया जा सकता है।

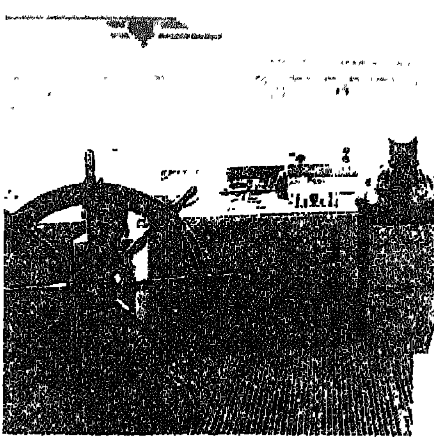
आर्थिक विवेचना संबंधी कुछ परीक्षणो के अनुसार आरम्भ मे यह उद्योग व इसमें लगाई गई पूंजी महंगी पड सकती है परन्तु कुछ वर्षो बाद समुद्र खनन, भूमि खनन की अपेक्षा सस्ता हो जाएगा क्योंकि खनिज पदार्थ का प्रतिशत और विस्तार समुद्र में कहीं अधिक है।

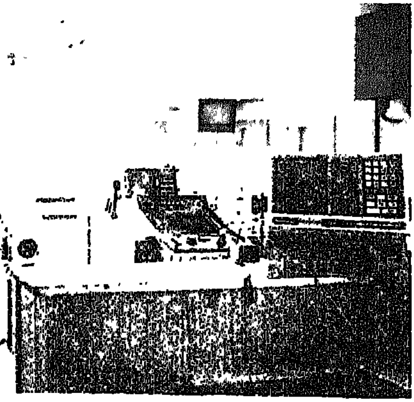
4

# अनुसंधान जलयान एवं सागरीय सर्वेक्षण हेतु प्रयुक्त उपकरण

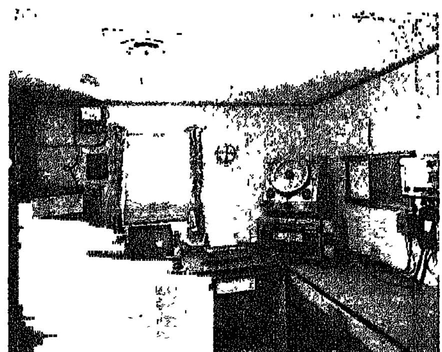
समुद्र विज्ञान अध्ययन की प्रक्रिया भूमि पर किये जाने वाले अध्ययन से काफी अलग होती है। सामान्यतः इसमें अत्याधुनिक इलेक्ट्रानिक व यान्त्रिकीय उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। समुद्र विज्ञान में प्रयोग किये जाने वाले साधनों में अनुसंधान जलयान (चित्र 3) सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। इन जलयानों के सही चयन पर अभियान की सफलता काफी हद तक निर्भर कर सकती है। उदाहरण के लिए समुद्र तल से नमूने एकत्र करते समय बहुत बडे और भारी जलयानों की अपेक्षा छोटे जहाज़ अधिक अनुकूल होते हैं क्योंकि इनकी गति को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।

**अनुसंधान जलयान** : यह पानी पर तैरती वातानुकूलित बहुमंज़िला इमारत के समान होता है। जहाज़ के विभिन्न तले (Deck) इमारत की विभिन्न मंज़िलों जैसे होते हैं। निचली मंज़िल या डेक अधिकांशतः पानी के स्तर के नीचे होती है। जहाज़ का संचालन करने वाले बड़े इन्जन, विद्युत जेनरेटर व ईंधन आदि इसी डेक पर रहते हैं। बीच की मंज़िलों पर वैज्ञानिकों, नाविकों, इन्जीनियरों व कर्मचारियों के रहने के लिए छोटे-छोटे वातानुकूलित कमरे (Cabin), राशन आदि के संग्रह हेतु बड़े, ठंडे गोदाम तथा प्रयोगशालाएँ आदि होती हैं। जलयान के सबसे ऊपरी डेक पर सबसे महत्त्वपूर्ण कक्ष यानी नौसंचालन नियंत्रण कक्ष (Bridge) (चित्र 10) होता है



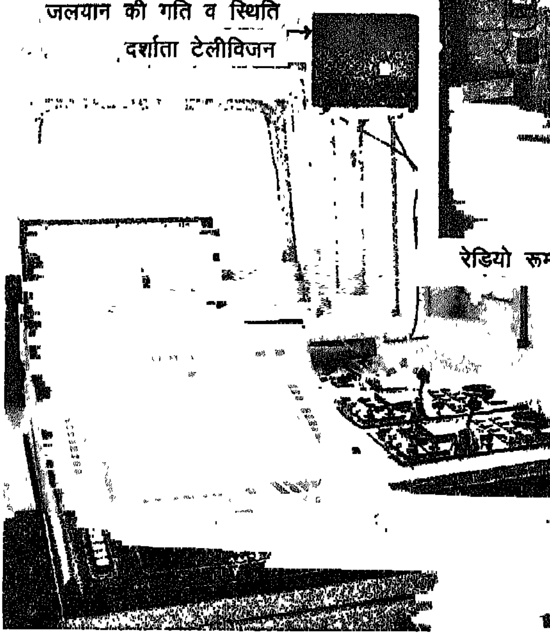


नौवहन कक्ष : व्हील हाउस

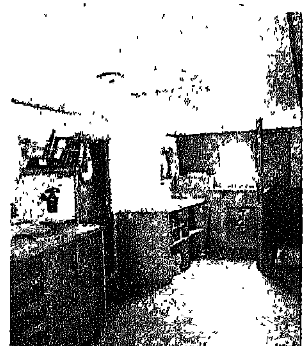


रेडियो रूम : रा.स.वि.सं. से नियमित संपर्क

जलयान की गति व स्थिति दर्शाता टेलीविजन



ए डी पी 100 डायनैमिक स्थिति निर्धारण

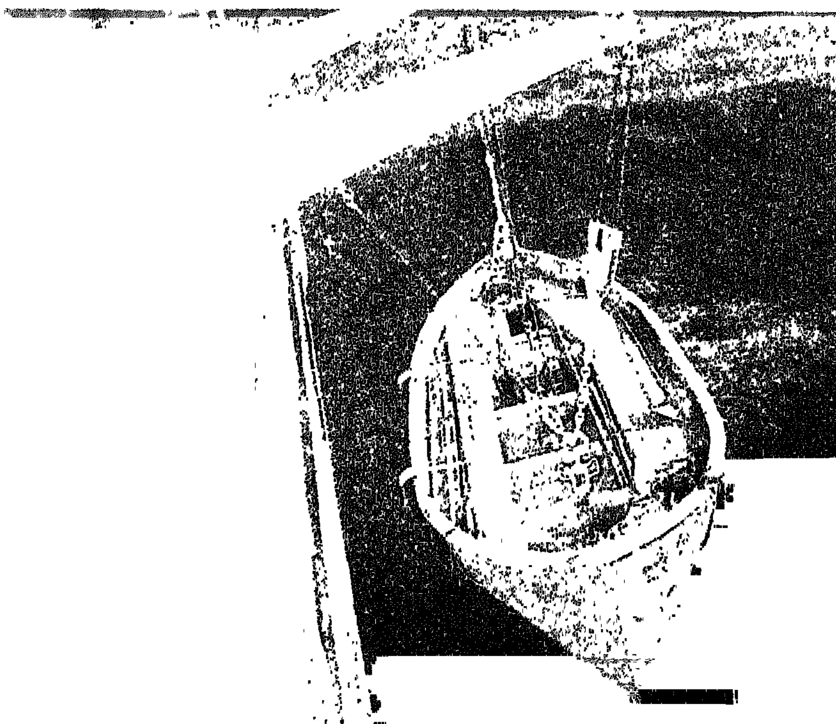


नौवहन कक्ष

**चित्र 10 : स्कैंडी सर्वेयर** नौवहन नियंत्रण कक्ष।

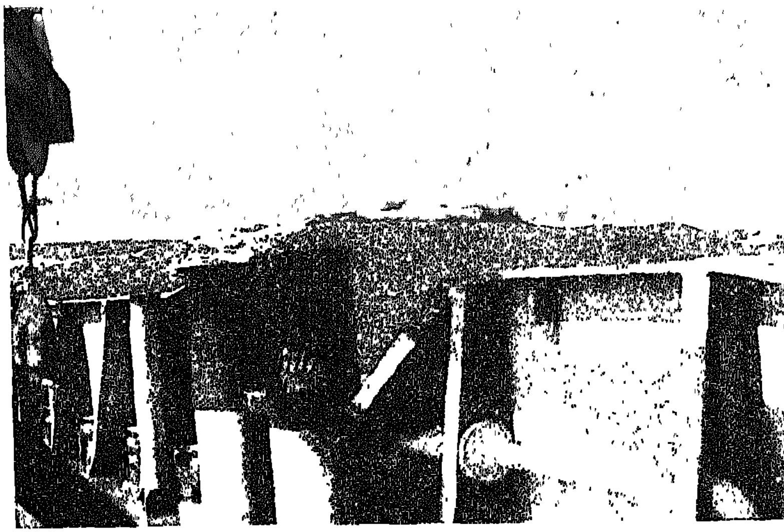
जहां से संचालन, समुद्र-संचार व यान की हर गतिविधि का नियंत्रण होता है।

इस तैरते मकान (यानी जलयान) में समुद्री क्रियाओं के अध्ययन के लिए वैज्ञानिकों, इंजन व कलपुर्जो के नियंत्रण व मरम्मत हेतु इंजीनियरों एवं नौसंचालन हेतु नाविकों, सभी को चौबीसों घंटे कार्यरत रहना पड़ता है। सबके लिए खाना पकाने, कपड़े धोने और सफाई करने वाले रसोइयों, धोबी व सफाई कर्मचारियों का काम भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। भूमि से दूर, इन सबके स्वास्थ्य का ध्यान रखने के लिए सभी जलयानों में अस्पताल की छोटी-छोटी सुविधाएँ व किसी-किसी जलयान में डाक्टर तक होते हैं। इस तैरती दुनियाँ (यानी जलयान) के कप्तान पर हर व्यक्ति की देखभाल की



चित्र 11 : अगर कोई दुर्घटना हो जाए तो ... .. नाव को समुद्र में उतारने का सुरक्षा अभ्यास।

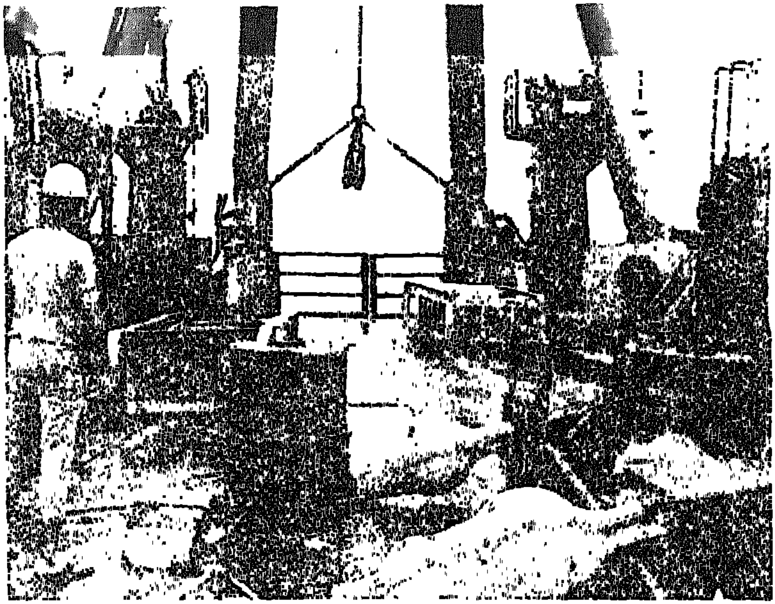
जिम्मेदारी होती है (चित्र 11)। इसके साथ-साथ ही उसे जलयान की सूक्ष्म देख-रेख व मौसम की प्रतिकूलता से बचाव करना पड़ता है (चित्र 12)। जो जहाज सामान का परिवहन करते हैं (Cargo Ships) वे बहुत बडे होते हैं तथा उनमें स्वीमिंग पूल तक होता है। परन्तु अनुसंधान जलयान (Research Ship) अपेक्षाकृत छोटा पर अत्याधुनिक यंत्रों से सुसज्जित होता है।



**चित्र 12 :** नंद-रचित से टकराती लहर।

अनुसंधान जलयानों में इनकी संरचना (Structure) के अनुसार प्रयोगशालाओं एवं कार्यशालाओं का स्थान अलग-अलग रहता है। सर्वेक्षण हेतु प्रयोग किये जाने वाले छोटे जलयानों में भी कम से कम दो प्रयोगशालाएँ आवश्यक होती हैं। छोटी-मोटी मरम्मत के लिए ड्रिलिंग व वैल्डिंग आदि मशीनों से युक्त कार्यशाला, फोटोकॉपी तथा फोटोग्राफी आदि सुविधाएँ सामान्यतः इन जलयानों में होती हैं।

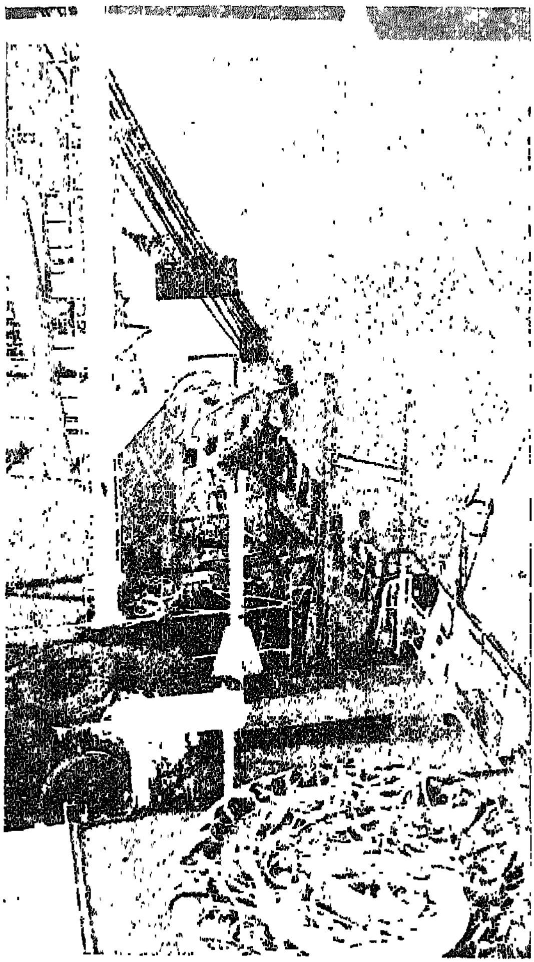
इन सबके अतिरिक्त समुद्र से नमूने (Samples) एकत्र करने वाले यंत्रों का संचालन जलयान के मुख्य डेक से होता है। इस डेक पर यंत्र-संचालन



चित्र 13 : मुख्य डेक पर एक झलक : **जी.ए.रे.** के दाँए कोने मे रखे नारंगी रग के **बूमैरेंग ग्रैब।**

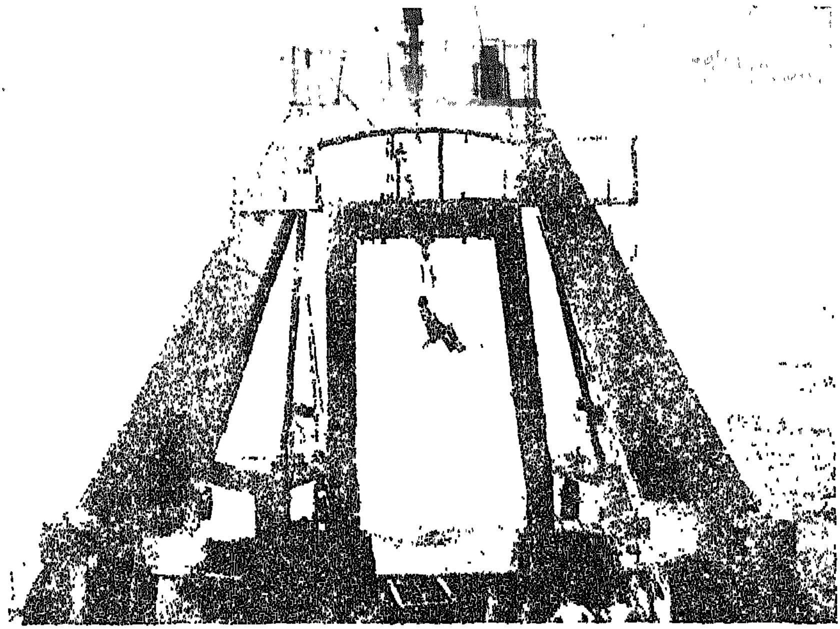
निर्विघ्न करने के लिए कम से कम (लगभग) 250 वर्ग मीटर खुली जगह की आवश्यकता होती है (चित्र 13)। इस जगह में विशालकाय उत्तोलक घिर्री (Winch) (जिससे 10 हज़ार मीटर लम्बा व 18 मिलीमीटर व्यास का तार समुद्र में छोड़ा व लपेटा जा सके) होती है। इसके अतिरिक्त, सामान उठाने वाली दो बड़ी क्रेनें, (चित्र 14) ड्रेज जैसे भारी यंत्रों को समुद्र से जहाज पर आसानी से लाने तथा ले जाने के लिए बडा 'ए फ्रेम' (चित्र 15) तथा 'जिब्बूम' आदि यंत्र व्यवस्थाएँ होती हैं। 'जिब्बूम' का उपयोग 10 टन से अधिक भार वाले यंत्र या सामान को जहाज़ से 3 मीटर से अधिक दूरी पर समुद्र में नीचे डालने के लिए किया जाता है।

मुख्य डेक की यह खुली जगह इस तैरते मकान के विशाल आंगन के समान है जिसे काम के साथ-साथ लोग टहलने तथा कभी-कभी खेलों का


चित्र 14 : नारगी रग की क्रेन नदरचित जलयान पर।

मैदान (चित्र 16) बना लेते हैं। इसके अलावा जलयान के अन्य तलों में खाने का बड़ा कमरा (Mess Room), रसोईघर (चित्र 17), छोटा पुस्तकालय, मनोरंजन के लिए वीडियो, स्टीरियो, रिक्रियेशन रूम और जिम्नैज़ियम रूम आदि सुविधाएँ होती हैं।

सुदूर क्षेत्र में इस तैरती जहाज़ी प्रयोगशाला का रेडियो (चित्र 10), टेलीफोन और टेलेक्स द्वारा भूमि पर स्थित प्रयोगशाला से नियमित संपर्क रहता है। उपग्रह की सहायता से स्थिति निर्धारण करने वाले अत्याधुनिक यंत्रों से इसकी दिशा एवं स्थिति पता चलती रहती है। सामान्यतः जलयान के हर महत्त्वपूर्ण क्षेत्र–प्रयोगशालाओं, इन्जन कक्ष व नौसंचालन नियंत्रण कक्ष जैसे स्थानों पर लगा कम्प्यूटर हर समय अक्षांश देशान्तर रेखाओं के मध्य जलयान की स्थिति व गति दर्शाता रहता है।



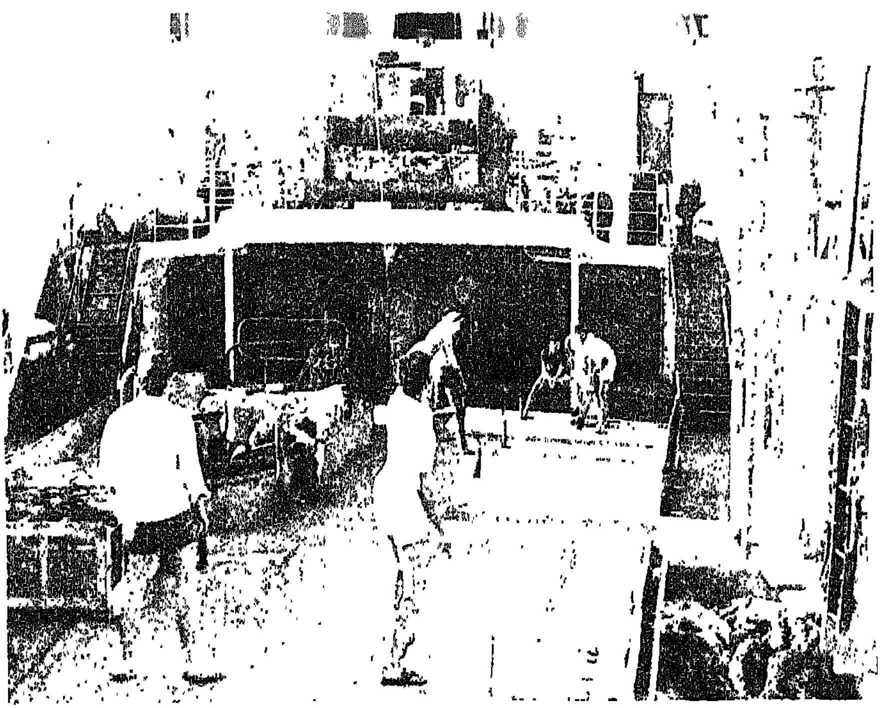
**चित्र 15 : ड्रेज जैसे बडे व भारी** उपकरणो को समुद्र मे, लाने, ले जाने हेतु **फरनैला** का विशाल **ए-फ्रेम।**

ज़हाज़ पर खुले समुद्र (High Seas) में काम करना रोमांचकारी होने के साथ-साथ दुष्कर भी होता है। समुद्री लहरों के कारण चलते समय जहाज़ आगे-पीछे, दाएं-बाएं, और ऊपर-नीचे हिलता रहता है, जिसे यॉथिंग, रोलिग व पिचिग कहते हैं। जब लहरें बडी हो जाती हैं तब जहाज का हिलना डुलना बढ जाता है। परिणामस्वरूप अक्सर हमारा शरीर साथ नहीं देता। सर घूमने लगता है, भूख लगनी बन्द हो जाती है और लोग 'कै' करने लगते हैं। इस बीमारी को *'सी-सिकनेस'* कहते है जिसका संबंध सीधे लहरों से है। समुद्र शात हुआ कि *'सी-सिकनेक'* गायब।

जहाज़ पर होने वाला हर काम जहाज़ की इन गतियों से प्रभावित होने लगता है। अतः सभी उपकरण, टी.वी., रेडियो, यहाँ तक कि मेज कर्सी को

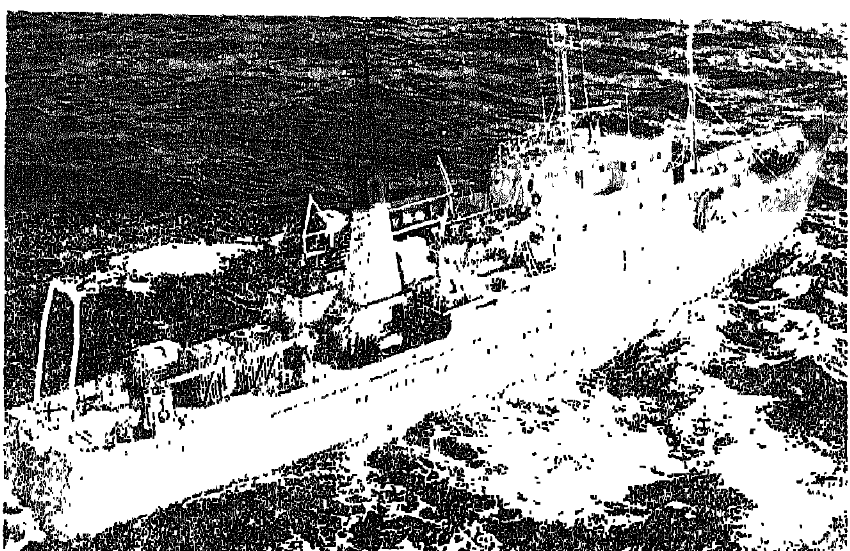
भी नट और बोल्ट से फिक्स करके रखना पडता है। खाना खाते समय तक प्लेट को पकडे रहना पड सकता है क्योंकि कभी वह गड़-गड करके एक जगह से दूसरी जगह सरक जाती है। तट रेखा से दूर जाते हुए जहाज का सम्पर्क धीरे-धीरे रेडियो, टी वी. तरंगो से भी टूट जाता है।

घर से खबर का कोई साधन नहीं, बातचीत के लिए लोग नहीं, फ्रीज़र में रक्खी सब्जियाँ खानी पड़े, और ऊपर से चौबीसों घंटे काम। इसी कारण कभी-कभी लोग असामान्य व्यवहार करने लगते हैं। खासकर नाविक जिन्हे हमेशा ही जहाज पर रहना पड़ता है। परन्तु जिन्हे समुद्र से प्यार है वे इन व्यवधानो के बावजूद भी बार-बार समुद्र में जाना पसंद करते हैं।



चित्र 16 : फरनैला के मुख्य डेक पर हिन्द महासागर मे क्रिकेट।

भारत का पहला बहुमुखी (Multi Disciplinary) समुद्री अनुसंधान जलयान **गवेषणी** समुद्र में केवल 25 दिन तक कार्य करने की क्षमता रखता था। मध्य हिंद महासागर गोवा से लगभग 2500 किलोमीटर दूर होने के कारण वहाँ तक आने-जाने में ही 15 दिन लग जाते हैं। अतः सर्वेक्षण के लिए ऐसे जलयानों की आवश्यकता महसूस की गई जो आने-जाने के अतिरिक्त लगभग 30 दिन और कार्य कर सके अर्थात् कुल 45 दिन की जलयात्रा की क्षमता रखते हों। इसके लिए बहुधात्विक पिंड सर्वेक्षण योजना के विभिन्न चरणों में नार्वे से **स्कैन्डी सर्वेयर** (चित्र 17 अ), ब्रिटेन से **फरनैला** (चित्र 3 स) व **जी.ए.रे.** (चित्र 13) तथा भारत की ही **एस. आर.** कम्पनी का **नन्द-रचित** ये सभी जलयान किराये पर लिये गए (तालिका 4.1)।



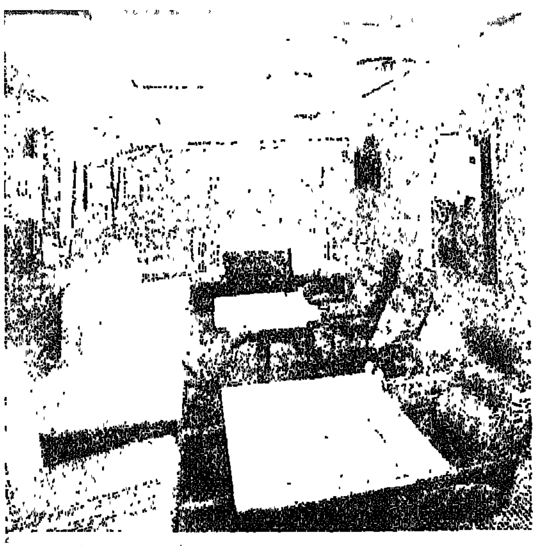
चित्र 17 (अ) : सर्वेक्षण हेतु नार्वे से किराए पर लिया गया **स्कैन्डी-सर्वेयर**।



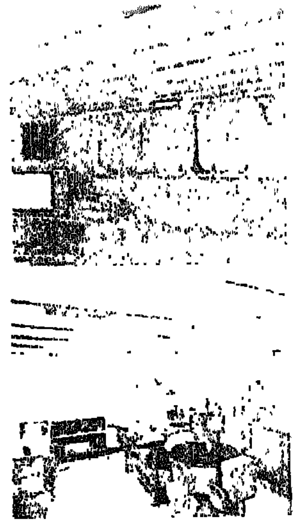
दो बिस्तरों वाले छोटे केबिन



बड़ा केबिन



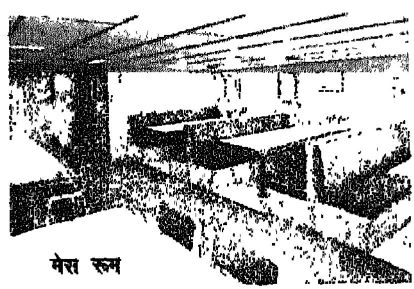
विश्राम–कक्ष



रसोईघर



फ्लैट



मेस रूम

चित्र 17 (ब) : स्कैन्डी सर्वेयर के अन्दर की झलक।

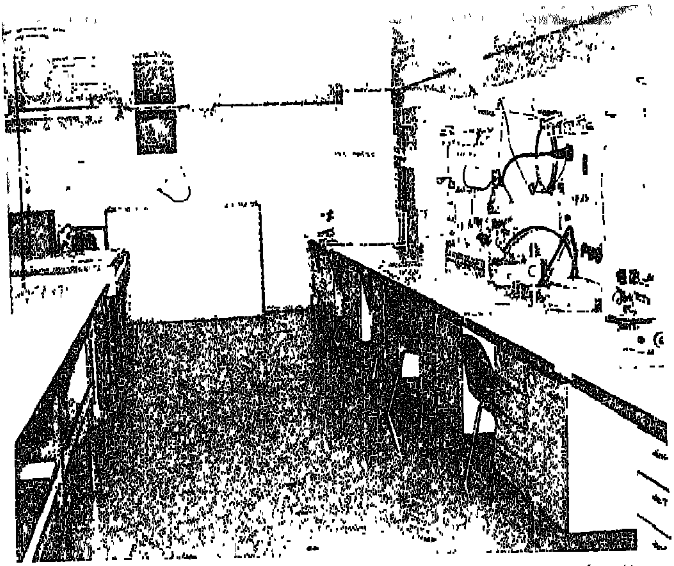
## तालिका 4.1

**हिंद महासागर में धात्विक पिंडों के सर्वेक्षण में प्रयुक्त 4 मुख्य शोध जलयान।**

| *जलयान* | *लम्बाई (मीटर)* | *चौडाई (मीटर)* | *ऊँचाई (मीटर)* | *कार्यशक्ति (दिन)* | *आवास कक्ष (संख्या)* | *प्रयोग-शालाएँ* |
|---|---|---|---|---|---|---|
| गवेषणी | 68.33 | 12.19 | 3 3 | 25 | 19 | 06 |
| सागर–कन्या | 100.34 | 16.39 | 5 6 | 45 | 31 | 13 |
| स्कैन्डी सर्वेयर | 63.26 | 11.58 | 4.6 | 45 | 25 | 02 |
| फरनैला | 76.6 | 12.65 | 5.1 | 45 | 20 | 02 |

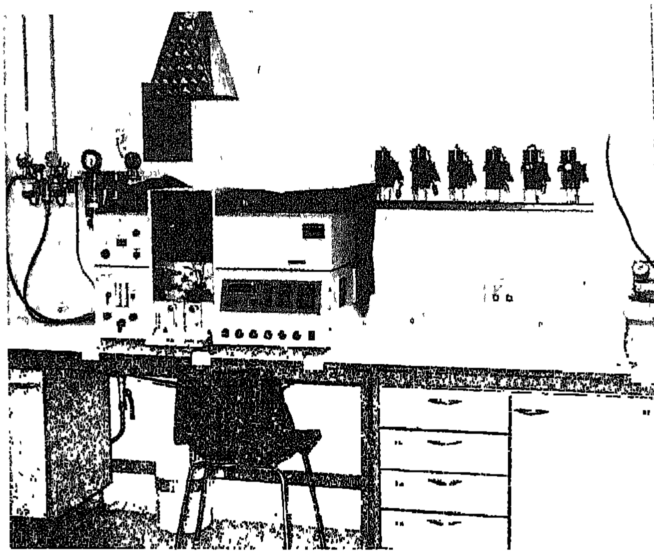
इन सब जलयानों के अतिरिक्त, जर्मन सरकार के सहयोग से मार्च 1983 में निर्मित **सागर-कन्या** (चित्र 3) का प्रयोग भी समय-समय पर किया जाता रहा है। **सागर-कन्या** खराब मौसम में भी लगभग दस हज़ार किलोमीटर की दूरी एक अभियान में तय कर सकता है। इस जहाज़ में भौतिक, रासायनिक, जैविक, भू एवं भू-भौतिक तथा मौसम विज्ञान संबंधी अत्याधुनिक उपकरण हैं। इस जहाज़ के दूसरे डेक पर चार प्रयोगशालाएँ, मुख्य डेक पर 5 प्रयोगशालाएँ (चित्र 18 क, ख) तथा 'ए' एवं 'बी' डेक पर चार अन्य प्रयोगशालाएँ हैं।

**सागर कन्या** पर स्थित कम्प्यूटर कृत्रिम उपग्रहों की सहायता से जहाज़ की स्थिति निर्धारण के साथ-साथ **ग्रैवीमीटर, मैगनेटोमीटर** एवं **एकोसाउन्डर** आदि यंत्रों से प्राप्त आंकड़ों को स्वतः अंकित करता रहता है। इन आंकडों को बड़े चुम्बकीय फीतों (Magnetic Tapes) पर उतारकर (Copy) बाद में इनका विस्तृत भू एवं भू-भौतिकीय अध्ययन किया जा सकता है। जुलाई 1990 में **सागर-कन्या** में तलीय संरचना मापने का बहुमूल्य (50 लाख डच मार्क लागत) उपकरण **हाइड्रोस्वीप**, जर्मनी में फिट करवाने के बाद इस जहाज़ ने भारत को आवंटित समस्त खनन-क्षेत्र का विस्तृत सर्वेक्षण किया है।



← (क)

चित्र 18 : सागर कन्या में : (क) बहुउद्देशीय प्रयोगशाला– जहाज की गति एवं स्थिति दर्शाता कम्प्यूटर सामने दीवार पर (ख) रासायनिक जाँच हेतु प्रयुक्त एटामिक एबजार्बशन स्पेक्ट्रोफोटोमीटर।



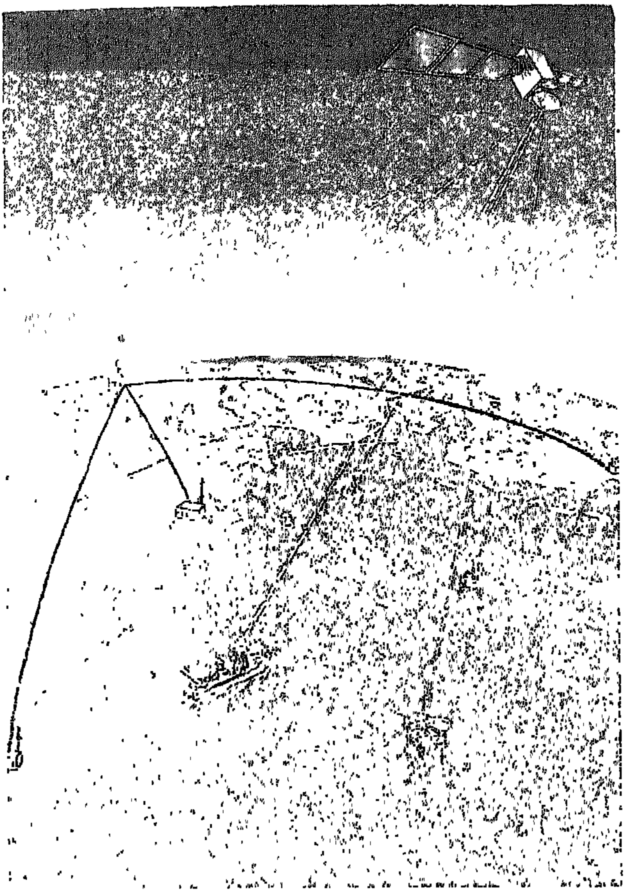
(ख) →

## नौसंचालन यंत्र

समुद्री सर्वेक्षण में जहाज़ की सही भौगोलिक स्थिति एवं दिशा का ज्ञान बहुत् महत्त्वपूर्ण होता है। संचालन हेतु प्रयोग में आने वाले यंत्रों का चुनाव प्रायः तटरेखा से कार्यस्थल की दूरी तथा कार्य की महत्ता पर निर्भर करता है। नक्षत्रों की सहायता से स्थिति-निर्धारण का प्रचलन संभवतः उतना ही प्राचीन है जितना समुद्री यातायात का। तट के समीपवर्ती क्षेत्रों में दिशा निर्धारण हेतु वहाँ पर स्थित किसी चिह्न जैसे **लाइट-हाऊस** या पहाडी आदि को लक्ष्य मानकर दिशा मापक यंत्रों से स्थिति का ज्ञान कर लिया जाता है। जबकि गहरे और दूर के क्षेत्रों में रेडियो प्रणाली पर आधारित पद्धति जैसे रेडार, ओमेगा आदि का प्रयोग किया जाता है।

औसत 5000 मीटर गहरे एवं तट से बहुत दूर बहुधात्विक पिंडों के क्षेत्र में निश्चित दिशा एवं स्थिति निर्धारण की आवश्यकता होती है। इसके लिए कृत्रिम उपग्रहों पर आधारित **सार्वभौम स्थिति-निर्धारण प्रणाली** (Satellite Navigation System) का प्रयोग किया जाता है। **सैटेलाइट नैवीगेशन सिस्टम** या कृत्रिम उपग्रहों की सहायता से संचालन, नक्षत्रों द्वारा दिशा निर्धारण के पुराने तरीके का ही आधुनिक रूप है। अंतरिक्ष में घूमते हुए इन कृत्रिम उपग्रहों द्वारा भेजे रेडियो संकेतों की सहायता से जहाज़ की सही स्थिति का गुणन कर लिया जाता है (चित्र 19)।

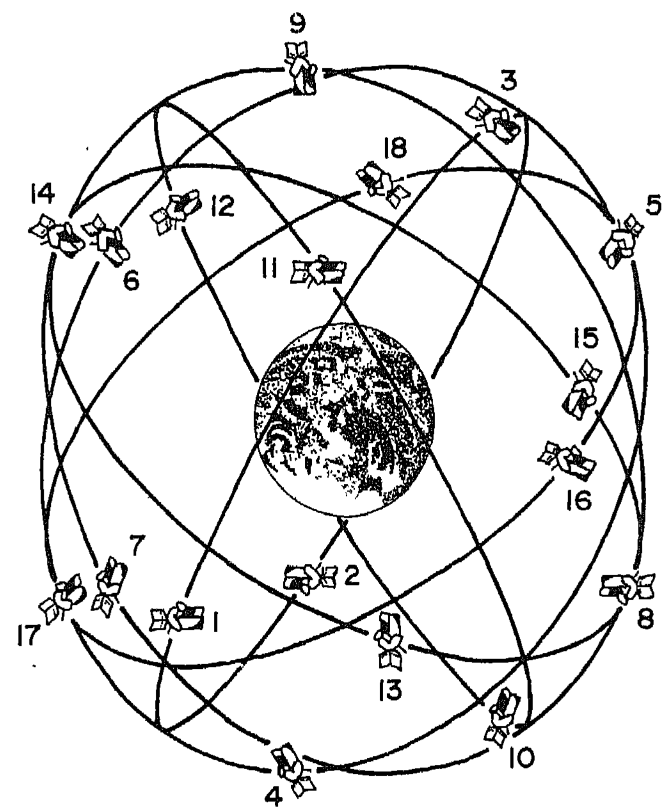
> मेडीटेरेनियन सागर व्यापार का मार्ग बन गया था। समुद्री यातायात बढने से दुर्घटनाएँ भी बढने लगी। इन्हें रोकने के लिए मिस्र के राजा टोलेमी$_1$ एवं टोलेमी$_2$ ने 279 सदी ईसा पूर्व एक विशाल लाइट हाऊस बनवाया। अलेक्जेन्ड्रिया स्थित इस लाइट हाऊस की रोशनी समुद्र में 25 मील दूर तक पहुँचती थी।
>
> रोम देशवासियों ने भी इसी तरह बहुत से लाइट हाऊस बनवाए। बहुत से देशों में ये लाइट हाऊस अभी भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं।



चित्र 19 : कृत्रिम उपग्रह द्वारा स्थिति निर्धारण

बहुधात्विक पिंडों की खोज के लिए उपरोक्त पद्धति के अतिरिक्त, 1992 से **सागर-कन्या** द्वारा **ग्लोबल पोज़ीशनिंग सिस्टम** (Global Positioning System) का प्रयोग किया जा रहा है। हाइड्रोस्वीप यंत्र द्वारा तलीय संरचनाओं की जानकारी के लिए यह पद्धति विशेष उपयोगी है। इसमें 18 कृत्रिम उपग्रह, 6 गोलाकार कक्षाओं में घूमते रहते हैं। जिनके द्वारा पृथ्वी के किसी भी स्थान पर किसी भी मौसम में लगातार चौबीसों घंटे स्थिति

निर्धारित की जा सकती है। अमरीका द्वारा विकसित इस प्रणाली में 18 कृत्रिम उपग्रहों– **नवस्टार** (Navigation System with Time and Ranging) की सहायता से रेडियो नौसंचालन (Radio Navigation) द्वारा स्थिति निर्धारित की जाती है। ये कृत्रिम उपग्रह 10,900 समुद्री मील (20,000 किलोमीटर) की कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा करते रहते हैं। 55° पर झुकी 6 कक्षाओं में, इनमे से 3 उपग्रह हर समय चक्कर लगाते रहते हैं (चित्र 20)। प्रत्येक उपग्रह की

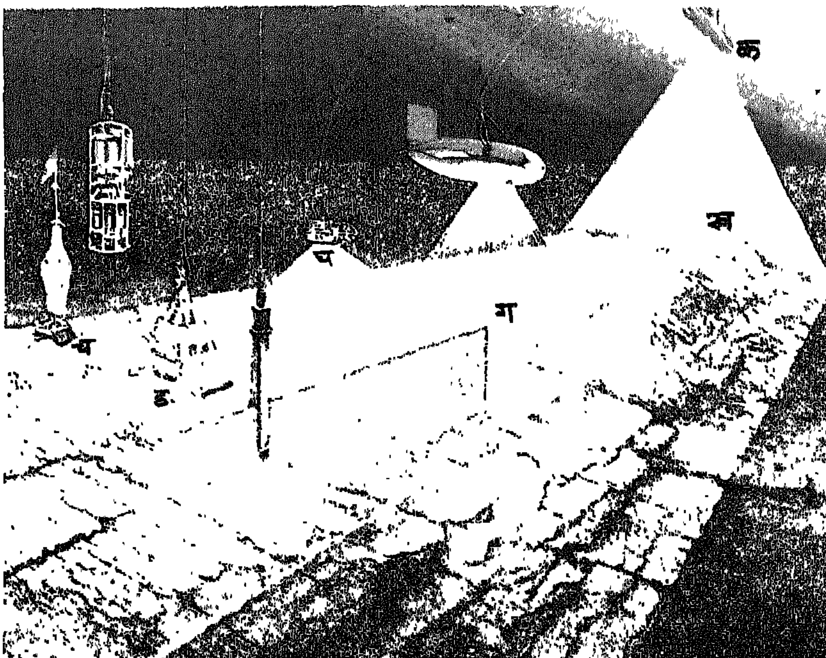



चित्र 20 : 18 नवस्टार उपग्रहो की कक्षाएँ।

स्वयं की कक्षा 12 घंटे की होती है। उपग्रहों की इस व्यवस्था के कारण पृथ्वी पर किसी भी जगह कम से कम 4 उपग्रहों द्वारा सीधे सम्पर्क किया ज़ा सकता है।

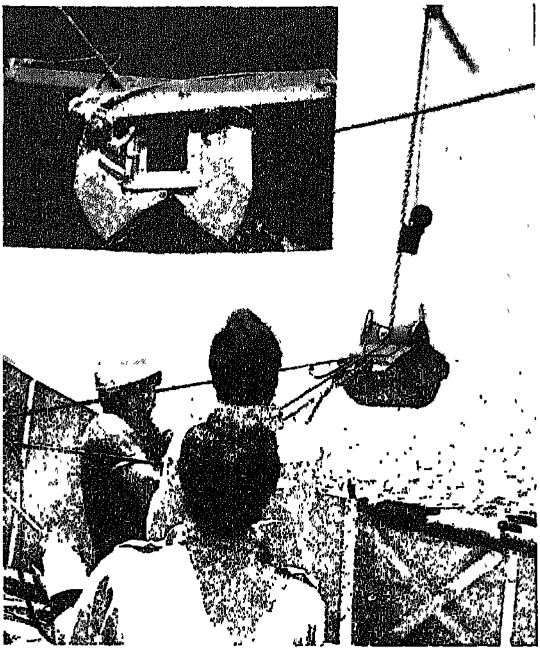
## समुद्रतल से नमूने (Samples) एकत्र करने हेतु प्रयुक्त उपकरण

गहरे समुद्र से बहुधात्विक पिंड एकत्र करने हेतु जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है (चित्र 21) उनमें से मुख्य उपकरण इस प्रकार हैं—




(क) अत्याधुनिक नौपरिवहन यन्त्रो द्वारा अनुसधान जलयान की स्थिति निर्धारण
(ख) हाइड्रोस्वीप द्वारा तलीय सरचना
(ग) डीप टो सयत्र
(घ) टी.वी कैमरे के साथ ओफोस द्वारा रगीन तलीय चित्रण
(च) बहुधात्विक पिडो के एकत्रीकरण हेतु प्रयुक्त ग्रैब—बूमैरैग ग्रैब
(छ) मल्टीसोन्ड . विश्वसनीय समुद्र विज्ञानीय पैरामीटर का मापन
(ङ) तलीय मिट्टी के नमूने निकालने हेतु प्रयुक्त ग्रैब

**चित्र 21 :** विभिन्न उपकरणो द्वारा अन्तर्जलीय सर्वेक्षण।



**चित्र 22 :** तलीय मिट्टी के नमुने एकत्रा करने हेतु— **पीटरसन ग्रैब,** (ऊपर) बांए कोने पर **वैनवीन ग्रैब**

**पीटरसन ग्रैब** (PETERSSON GRAB)

इस यंत्र का नाम इसके आविष्कारक के नाम पर प्रचलित है। दो जबड़े वाले यंत्र **ग्रैब** (चित्र 22) को लोहे के तार में बांधकर **विंच** की सहायता से समुद्रतल पर भेजते हैं। वहाँ पहुँचते ही इसके दोनों जबड़े मिट्टी में थोडा धंस जाते हैं। तार द्वारा ग्रैब को थोड़ा ऊपर खींचने पर एक विशेष क्रिया (Triggering) द्वारा इसके दोनों जबड़े उस स्थल पर एकत्रित पदार्थ (Sediment) सहित बन्द हो जाते हैं। इस ग्रैब को विंच द्वारा ऊपर जहाज़ पर खींचकर इसमें एकत्रित पदार्थ का उस स्थल के नमूने के रूप में अध्ययन किया जाता है।

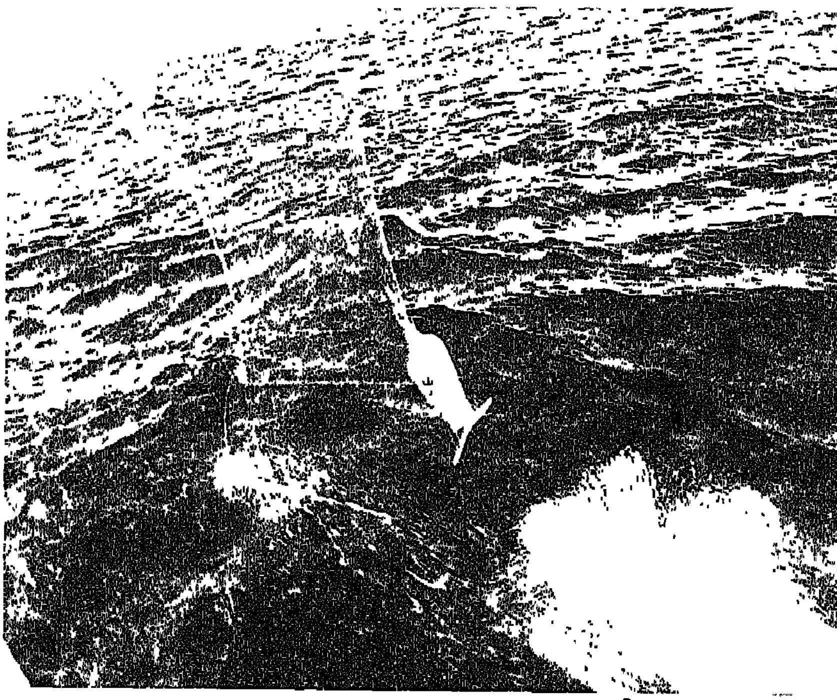
बहुधात्विक पिंडों की खोज के लिए मध्य हिंद महासागर में किये गए प्रारंभिक सर्वेक्षणों में इस यंत्र का प्रयोग किया गया। इस ग्रैब को तल तक

डालकर ऊपर वापस लाने की क्रिया में लगभग 4 घंटे तक का समय लग जाता है।

**बूमेरैंग ग्रैब** (BOOMERANG GRAB)

इस ग्रैब में पीटरसन ग्रैब की अपेक्षा बहुत कम समय लगता है। अतः बहुधात्विक पिंडों के सर्वेक्षण के लिये बूमेरैंग ग्रैब बहुत उपयोगी होता है। वास्तव में बूमेरैंग ग्रैब भेजने और वापस आने में 2 से 3 घंटे का समय लगता है। इस ग्रैब के प्रयोग में जहाज की पुली या तार की आवश्यकता नहीं होती है अतः एक साथ 5–7 ग्रैब 2–3 घंटे में भेजे और निकाले जा सकते हैं। इसके निचले सिरे पर एक जाली बंधी होती है, जिससे महीन मिट्टी जैसे पदार्थ छनकर बाहर निकल जाते हैं और पिंड संग्रहीत होकर ऊपर आ जाते हैं।

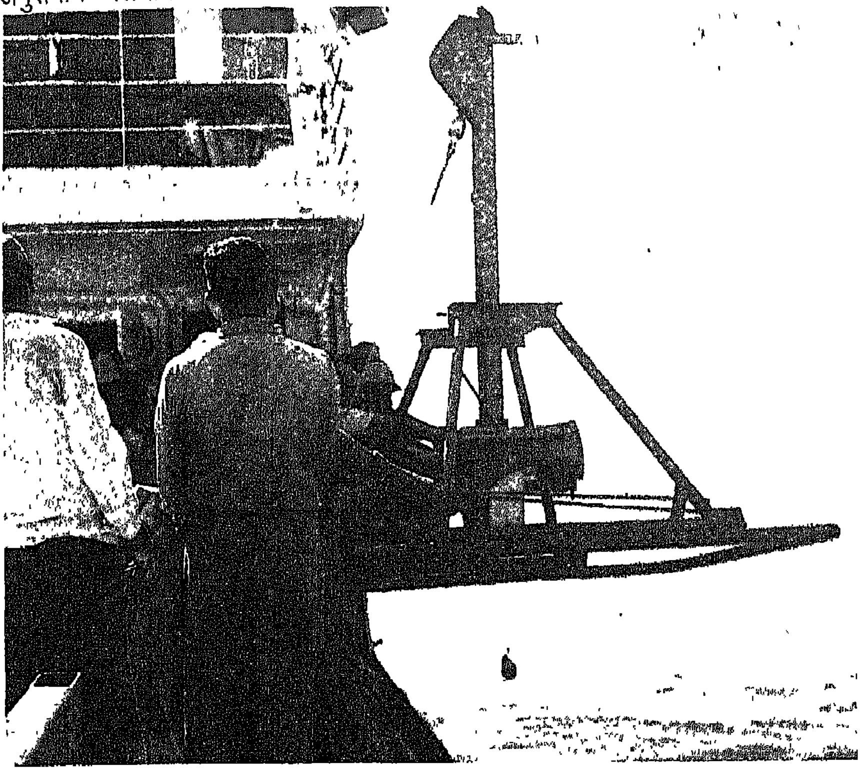
वास्तव में बूमेरैंग ग्रैब उपकरण के दो भाग होते हैं—प्लव (Buoy) एवं ग्रैब (Grab); प्लव में काँच के बड़े गोले होते हैं। इनके अंदर का स्थान वायुरहित होता है और उनके ऊपर प्लास्टिक या फायबर ग्लास का खोल (Cover) चढ़ा होता है। प्लव के निचले सिरे पर एक जालीदार ग्रैब बांधकर, इस ग्रैब के दोनों किनारों पर 20–20 किलोग्राम भार के 2 लोहे के बांट अटका दिये जाते हैं। ऊपरी सिरे पर दिन के समय एक रेडियोबीकन छड़ी और एक झण्डा तथा रात में रेडियोबीकन व एक टार्च बांध देते हैं। जिस स्थान पर नमूने एकत्र करने होते हैं वहाँ पर जहाज़ ले जाकर क्रेन की सहायता से इसको समुद्र में छोड़ दिया जाता है। ग्रैब में अटके भार के कारण यह बिना तार के अपने ही भार से पानी के अंदर डूबता जाता है। समुद्र तल छूते ही झटका लगने से ये भार गिर जाते हैं और प्लव में निर्वात के कारण यह ऊपर उठने लगता है। ऊपर उठते समय ग्रैब के दोनों जबड़े बन्द हो जाते हैं और जिस जगह पर यह ग्रैब ज़रा-सी देर ठहरा था, वहाँ का पदार्थ इसके जबड़ों में बंद हो जाता है। प्लव में लगे झंडे या टार्च के कारण इसे



चित्र 23 : बूमेरैंग ग्रैब—जाल में फसाकर वापस जहाज पर लेते हुए।

पहचानकर धीरे-धीरे जलयान इसके पास ले जाकर जाल में फंसाकर इसे वापस जहाज पर उठा लेते हैं (चित्र 23)। ग्रैब में फंसा पदार्थ उस जगह पर उपस्थित बहुधात्विक पिंडों के भार का प्रतिनिधित्व करता है। यदि किसी कारणवश प्लव दृष्टि से ओझल हो जाये तो इसमें लगाये रेडियोबीकन द्वारा उत्पन्न संकेतों से इसको दिशा-बोधक यंत्र की सहायता से खोज लेते हैं।

बहुधात्विक पिंडों के सर्वेक्षण में एक स्थान पर एक साथ भेजे गये 5 से 7 ग्रैब का औसत उस स्थल के 1 वर्गमीटर क्षेत्र पर इनके कुल भार का मापदण्ड माना जाता है।



चित्र 24 : स्पेड कोरर (कैमरे के साथ) समुद्र में भेजते हुए।

## स्पेड कोरर (SPADE CORER)

बहुधात्विक पिंडों की समुद्र तल पर स्थिति का अध्ययन करने के लिए इस उपकरण (चित्र 24) का प्रयोग किया जाता है। यह यंत्र स्पेड यानी फावड़े की तरह से समुद्र की मिट्टी ऊपरी 45 सेमी. गहराई तक खोद लाता है। चूंकि पिंड मिट्टी की ऊपरी सतह पर एक तह में बिखरे हैं अतः स्पेड कोरर द्वारा लाए पदार्थ से (चित्र 25) पिंडों का वहाँ की मिट्टी के साथ संबंध समझा जा सकता है।

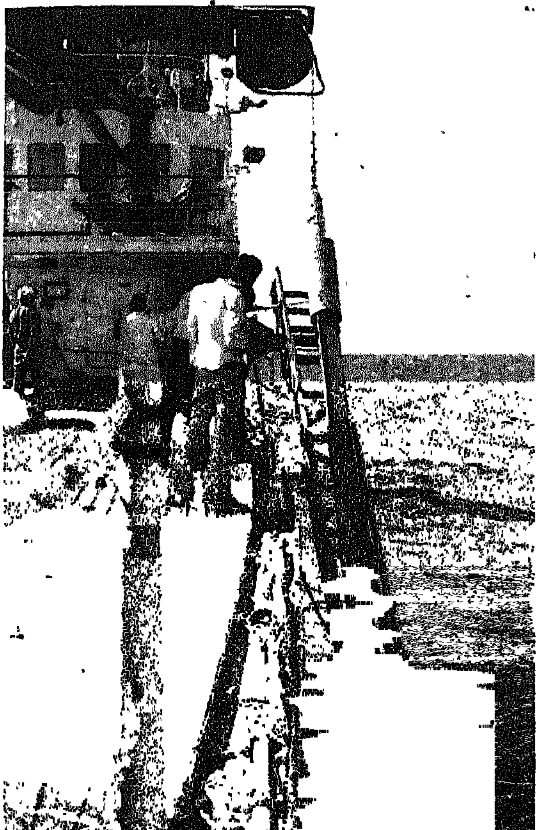


**चित्र 25 :** स्पेड कोरर द्वारा लाए गए पदार्थ की ऊपरी तह मे पडे काले बहुधात्विक पिड।

## बॉक्स कोरर (BOX CORER)

बॉक्स कोरर (चित्र 26) का प्रयोग भी समुद्र तल की ऊपरी कुछ मीटर मोटी तह (Top Sediment) का अध्ययन करने हेतु किया जाता है। यह कोरर मिट्टी को उसी दशा में भर लेता है जिसमें यह समुद्रतल पर है और मिट्टी बिना किसी बाधा (Disturbance) के आ जाती है।

बॉक्स एवं स्पेड दोनों ही कोरर की ऊपरी सतह पर भारी बांट बांधकर तार द्वारा वेग से पानी में छोड़ देते हैं ज़िससे यह तल की मुलायम मिट्टी में धंसकर उसे संग्रह कर लेते हैं।



चित्र 26 : बाक्स कोरर भेजते हुए **सागर-कन्या।**

**ग्रैविटी कोरर** (GRAVITY CORER)

गुरुत्व के प्रयोग वाले इस कोरर के मुख्य भाग प्लास्टिक या एक्रेलिक के पतले पाइप होते हैं जिनकी ऊपरी सतह पर भार (Weight) बांधकर समुद्र में भेजते हैं। ऊपर बंधे भार का वजन पाइप की लम्बाई के अनुपात में रखा जाता है जैसे कि 3 मीटर लम्बे पाइप पर 500 किलोग्राम का भार। इस भार को पाइप की लम्बाई के अनुपात में बढ़ाते हैं। भार के कारण पाइप तल की मुलायम मिट्टी में धंसता चला जाता है। जहाज़ पर लगे यंत्रों से पानी में इसकी स्थिति पता चलती रहती है जिससे तल पर पहुँचने के थोड़े ही समय बाद इसे वापस ऊपर खींच लेते हैं। तटरेखा से दूर गहरे समुद्र में एक इंच मिट्टी जमा होने में हज़ारों वर्षों का समय लग जाता है। मध्य हिंद महासागर में यह दर 1–3 मिलीमीटर प्रति हज़ार वर्ष है। कोरर द्वारा लाई गई मिट्टी की तहों (Layers) का अध्ययन करके भूतकाल (Geological Past) में इस मिट्टी के समुद्र में क्रमिक जमाव के बारे में पता चलता है।

चित्र 27: (क) धात्विक पिंड एकत्र करने जाता हुआ ड्रेज। →



चित्र 27: (ख) एकत्रीकरण कर वापस आए ड्रेज मे धात्विक पिंड व क्रस्ट। ↓



## ड्रेज (DREDGE)

ज्यादा मात्रा में पदार्थ एकत्र करने हेतु ऊपर वर्णित उपकरणों द्वारा एकत्रित नमूनों की मात्रा बहुत कम होती है। उदाहरण के लिये बहुधात्विक पिंडों से धातुकर्म कर प्रयोगशाला में धातुएँ निकालने के लिए बहुत अधिक पिंडों की आवश्यकता होगी। अतः बड़ी मात्रा में इन्हे एकत्र करने के लिए ड्रेज का (चित्र 27 क) प्रयोग किया जाता है। बहुत बड़ी बाल्टी या कनस्तर की तरह का मजबूत ड्रेज तार की सहायता से समुद्रतल पर भेज दिया जाता है। जहाज़ के बहुत धीमी गति से चलने के साथ-साथ ड्रेज समुद्र तल पर घिसटता रहता है तथा तलहटी की ऊपरी सतह को खुरचता हुआ वहाँ उपस्थित पत्थर, धात्विक पिंड आदि अपने अंदर भरता चलता है (चित्र 27 ख)। 2–3 घंटे बाद जब ड्रेज भर जाने की उम्मीद होती है तब इसे जहाज़ पर वापस खींच लेते हैं। मध्य हिंद महासागर के **प्राइम एरिया** में एक अभियान में लगभग 15 टन तक पिंड इससे एकत्र किये गये हैं (चित्र 27 ग)।

# समुद्रतल के चित्रण (PHOTOGRAPHY) में प्रयुक्त उपकरण

नमूने एकत्र कर समुद्र तल अध्ययन के साथ-साथ, फोटोग्राफी द्वारा तलीय चित्र लेकर जानकारी एकत्र करना भी हमारे लिए बहुत आवश्यक होता है। इसके लिए जो उपकरण प्रयोग किए जाते हैं उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं :–

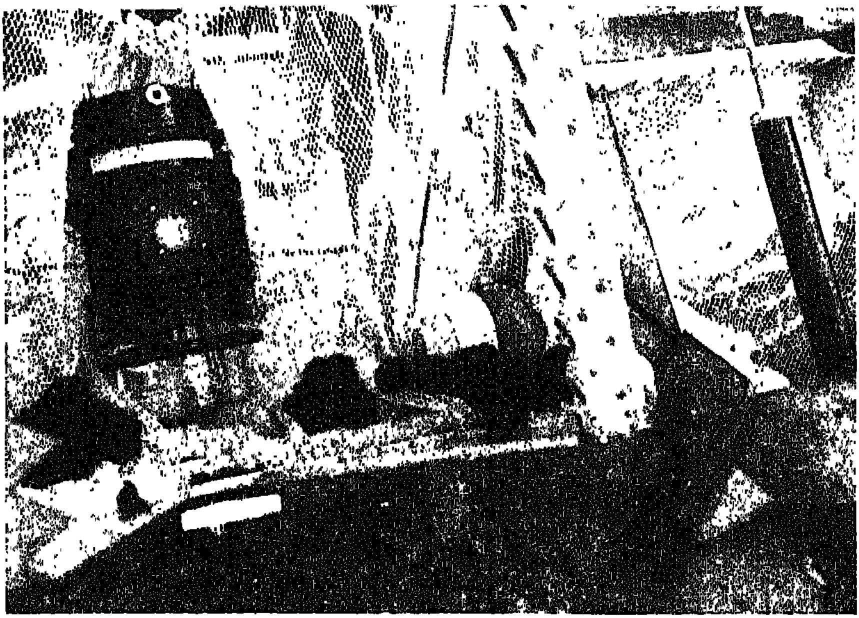
## फोटोबूमेरैंग ग्रैब (PHOTO BOOMERANG GRAB)

ऊपर वर्णित बूमेरैंग ग्रैब के अंदर एक वाटर प्रूफ कैमरा फिट कर दिया जाता है। इस कैमरे के एक सिरे पर लगभग 1.5 मीटर लम्बी रस्सी बंधी होती है जिसके दूसरे किनारे पर लगभग 5 किलोग्राम भार का एक बड़ा लट्टू बंधा होता है। इस लट्टू का प्रयोग कैमरा क्लिक कराने के लिए किया जाता है। जैसे ही ग्रैब समुद्र तल से लगभग 1.5 मीटर की दूरी पर पहुँचता



**चित्र 27:** (ग) ड्रेज से बहुधात्विक पिंडों की निकासी।

है लट्टू जमीन के अंदर धंस जाता है और कैमरा तुरन्त क्लिक हो जाता है। इस बूमेरैंग ग्रैब में बहुधात्विक पिंड तो संग्रह हो ही जाते हैं, साथ ही साथ उस स्थान की फोटो भी आ जाती है (चित्र 28)। फोटो देखकर यह पता



**चित्र 28: फोटोबूमरैंग ग्रैब** : कैमरा, एकत्रित पिंड और कैमरे को क्लिक कराने हेतु बड़ा लट्टू *(दाहिने कोने में)*

चल जाता है कि पिंड समुद्र तल पर किस प्रकार बिखरे थे। कभी-कभी ऐसा होता है कि पिंडों के ऊपर मिट्टी की पतली सी तह जमा हो जाती है। जिससे फोटोग्राफ में पिंड अनुपस्थित दिखाई देते हैं परन्तु ग्रैब में यह अच्छी मात्रा में ऊपर आ जाते हैं। इसी तरह कभी-कभी ग्रैब ऐसे स्थान पर जा बैठता है जहाँ पर ये पिंड बिल्कुल भी न होकर 10–20 सेंटीमीटर दूरी पर ही बहुतायत से मिलते हैं। ऐसी परिस्थिति में कैमरा तो उस जगह पर इनकी उपस्थिति दर्शाता है परन्तु ग्रैब में इन पिंडों का संग्रह शून्य रहता है। इन दोनों परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इनका तुलनात्मक अध्ययन समुद्र तल पर इन पिंडों के विस्तार की ज़्यादा स्पष्ट सूचना देता है। इसके अतिरिक्त कैमरे से समुद्र तल पर रहने वाले जीव जन्तुओं का रहन-सहन, जीवन और बनावट भी पकड़ में आ जाती है।

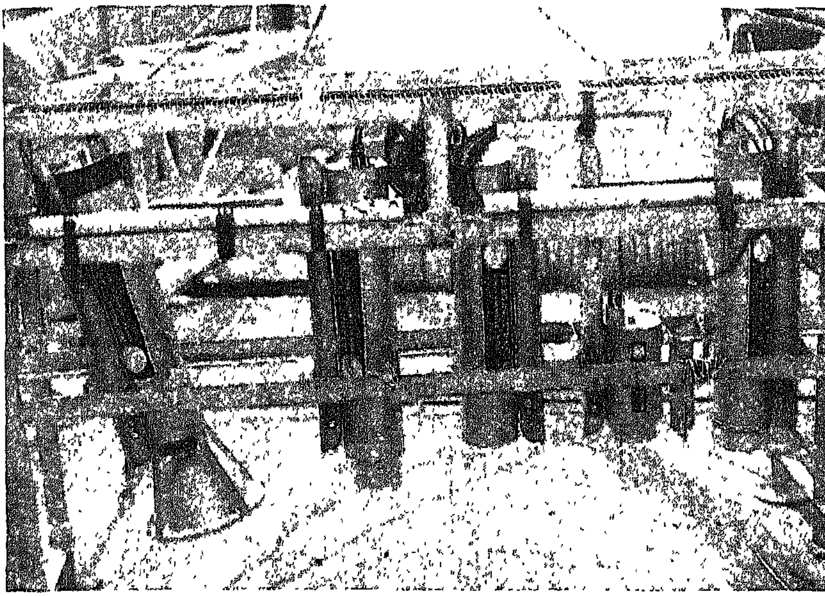
**कैमरा** (CAMERA)

सन् 1926 में अमरीकी जीव वैज्ञानिक डा. सैम्युल लांगले ने **नैशनल ज्योग्राफिक सोसायटी** की सहायता से समुद्र विज्ञान में फोटोग्राफी का प्रयोग आरम्भ किया। **वुड्सहोल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीट्यूट** के वैज्ञानिकों ने कैमरे को तारों में बांधकर पहली बार गहराई के चित्र लिये। आरम्भ में, अक्सर यह समस्या आती थी कि कैमरा कब तल पर पहुॅचा? कभी-कभी तल पर पहुँचने से पहले ही कैमरा क्लिक हो जाता और कभी यह तल से टकराकर खराब हो जाता था। यह कठिनाई दूर करने के लिए वुड्सहोल ओशेनोग्राफी इन्स्टीट्यूट के ही डा. हैरोल्ड ईडगरटन ने एक उपकरण **पिंगर** (Pinger) का आविष्कार किया। यह उपकरण "पिंग-पिंग-पिंग" की ध्वनि के साथ पानी में नीचे उतरता है। इन ध्वनि संकेतों में से कुछ संकेत कैमरा स्वयं ग्रहण कर लेता है और कुछ संकेत परावर्तित होकर जहाज़ पर वापस पहुँच जाते हैं। इन दोनों आवाज़ों के जहाज़ तक पहुँचने के समय के अंतर से कैमरे की सही स्थिति का अनुमान हो जाता है। कैमरा तल की ओर जाते समय जहाज़ पर स्थित रिकार्डर में पिंगर की स्थिति अंकित होती रहती है, जिससे कैमरे की समुद्र तल से दूरी ज्ञात होती रहती है।

कैमरे के साथ फ्लैश लाइट्स, बैटरी और पिंगर सब एक साथ स्टील फ्रेम में जड़कर (चित्र 29) तल से लगभग 5 मीटर की ऊँचाई पर तल में उतारते हैं। कैमरे में बूमैरेंग कैमरे की भांति ही रस्सी और लट्टू का प्रयोग कैमरा क्लिक कराने के लिये किया जाता है। समुद्र तल पर पहुँचने के बाद कैमरे को थोड़ा ऊपर-नीचे 'क्लिक' करवाते रहते हैं ताकि एक बार में ही आस-पास की ज्यादा तस्वीरें खींची जा सकें।

**अन्तर्जलीय टेलीविज़न** (UNDERWATER TELEVISION)

टेलीविज़न-कैमरों को समुद्रतल पर लटका देते हैं, जहाज़ के चलने के साथ-साथ समुद्रतल की तस्वीर लगातार जहाज़ पर लगे टी.वी. पर दिखाई



चित्र 29 : अंतर्जलीय कैमरा–बैटरी, फ्लैश लाइट और पिंगर के साथ

देती रहती हैं। सन् 1951 में ब्रिटिश पनडुब्बी **एफ्फरे** टेम्स नदी के मुहाने पर डूब गई। इसे खोजने के लिये वाटरप्रूफ खोल के अंदर टेलीविज़न-कैमरे रखकर पनडुब्बी डूबने की जगह पर, जहाज़ द्वारा लटकाए गए। इस खोज करने वाले जलयान के उस जगह पर चक्कर लगाते समय जहाज़ में लगे टी.वी. पर टेलिविज़न-कैमरे की सहायता से यह डूबी पनडुब्बी दिखाई दे गई। तब से अन्तर्जलीय टेलीविज़न समुद्र विज्ञान का एक अंग बन गया है और समय के साथ-साथ आज यह तकनीक बहुत विकसित हो गई है।

## डीप टो (DEEP TOW)

अन्तर्जलीय टेलीविज़न का अत्याधुनिक स्वरूप, डीप टो नामक उपकरण तल से 5–10 मीटर ऊँचाई पर मजबूत तारों द्वारा लटका दिया जाता है। डीप टो में कैमरे, टी.वी.-कैमरे, फ्लैश बत्तियाँ एवं ऊँचाई मापक यंत्र फिट

रहते हैं। जहाज़ के धीमी गति से चलने के साथ इन कैमरों द्वारा लगातार खींची जाने वाली तस्वीरें जहाज़ में लगे टी.वी. पर्दे पर लगातार देखी जा सकती हैं। डेक से इस यंत्र में लगे कैमरों का संचालन संभव होता है।

समुद्री वातावरण एवं पारिस्थितकी अध्ययन, अति सूक्ष्म तलीय संरचनाओं तथा खनिजों के सर्वेक्षण में डीप टो का प्रयोग किया जाता है।

## गहराई नापने के उपकरण

गड्ढे में पैर डालने से यह पता चल जाता है कि गड्ढे में कितना पानी है। इसी तरह आरम्भ में उथले क्षेत्रों में लकडी के डंडे को चिन्हित करके या रस्सी को चिन्हों में विभाजित करके पानी की गहराई नापी जाती थी। इस रस्सी के एक सिरे पर सीसे (Lead) का भार बांधकर पानी में डालते थे, जितनी रस्सी पानी में डूबी वह पानी की गहराई होती थी। इस विधि को **लेड लाइन** (Lead Line) के नाम से जाना जाता है।

मैगलेन नाविक (1480–1521) ने प्रशांत महासागर के सेंट पाल और टिबूरोन्स नामक द्वीपों के बीच पाँच साधारण तारों के सिरे आपस में बांधकर समुद्र में लटकाया। फिर भी उसे समुद्रतल की थाह न मिल सकी तो वह इस स्थान को ही समुद्र का सबसे गहरा स्थान समझ बैठा था।

वैज्ञानिकों के मन में किसी ऐसे आविष्कार की कल्पना उठने लगी जो कैमरे की तरह समुद्र की तलीय संरचना एवं गहराई बता सके। विश्वयुद्ध के समय डूबी पनडुब्बियों का पता लगाने के लिये फ्रांस, अमरीका और ब्रिटेन आदि देशों ने ध्वनि का प्रयोग कैमरे की तरह करके **सोनार** (Sonar) विधि खोज निकाली जो 1930 तक काफी प्रचलित हो गई थी। इसी सोनार (Sound Navigation and Ranging) विधि का प्रयोग करके तरह-तरह के एको (यानि गूंज या प्रतिध्वनि) साउन्डर यंत्र बनाये गए।

### एकोसाउन्डर (ECHO SOUNDER)

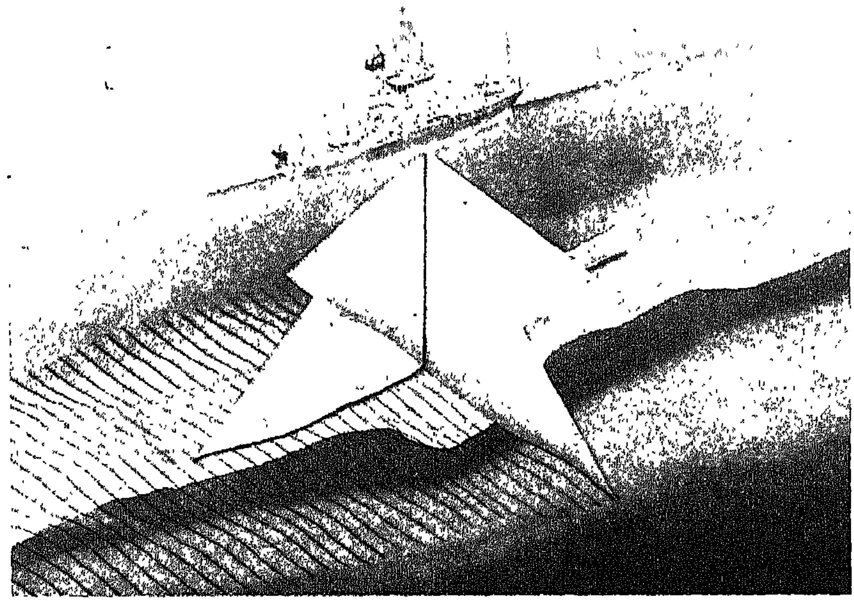
एक बड़े कमरे में आवाज़ लगाने पर वह बार-बार गूँज के रूप में सुनाई पड़ती है क्योंकि आवाज़ से निकली ध्वनि दीवार से टकराने के बाद वापस

लौटती है और फिर सुनाई देती है। इसी तरह एकोसाउन्डर में भी ध्वनि तरंग भेजी जाती हैं जो समुद्र तल से टकराकर वापस लौट आती हैं। इन तरंगों के भेजने और वापस पहुँचने के बीच के समयान्तर से उस स्थल की गहराई एवं तलीय संरचना का पता चल जाता है। अगर दुश्मनों द्वारा भेजी पनडुब्बियों का पता करना हो तो उसके लिये दूसरी तरह की ध्वनि भेजने का प्रबंध एकोसाउन्डर में होगा और तलीय संरचनाएँ पता करने के लिए अलग किस्म का एकोसाउन्डर प्रयोग किया जायेगा।

ध्वनि और प्रतिध्वनि के आधार पर बने सभी एकोसाउन्डरों में ध्वनि तरंगों (Sound Waves) को भेजा जाता है जो समुद्र धरातल आदि से टकराकर परावर्तित होकर वापस लौट आती हैं। इस कार्य के लिए यंत्र में तीन मुख्य मशीनें होती हैं– (1) *ट्रांसमीटर (Transmitter)* : जिसके द्वारा अल्ट्रासॉनिक कम्पनों को भेजा जाता है। (2) *रिसीवर (Receiver)* : जो वापस आते संकेतों को ग्रहण कर सकें और *(3) रिकार्डर (Recorder)* : जो वापस हुए संकेतों को अंकित कर सकें।

ट्रांसमीटर कई तरह से अल्ट्रासॉनिक कम्पनों को पैदा कर सकता है। एक विधि में **स्पार्कर** (Sparker) का प्रयोग किया जाता है जिससे गैस लाइटर की तरह एक विद्युत चिंगारी निकलती रहती है। दूसरी विधि में एक **पीज़ो इलेक्ट्रिक** (Piezo Electric) या दाब विद्युत क्रिस्टल का प्रयोग होता है। तीसरी विधि में चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति बढ़ाने-घटाने से इसमें स्थित निकिल प्लेट के फैलने और सिकुड़ने से कंपन पैदा होती हैं। इसी भांति अन्य कई विधियाँ कम्पन पैदा करने में प्रयोग की जाती हैं।

अल्ट्रासॉनिक कम्पन उत्पन्न करने वाले ये सभी यंत्र ट्रान्सड्यूसर (Transducer) में ही एक साथ बनाये जा सकते हैं। ट्रान्सड्यूसर में ट्रांसमीटर और रिसीवर दोनों एक साथ ही लगाए जा सकते हैं। रिकार्डर में छोटा सा पेन या **स्टाइलस** होता है जो पहले से अंकित कागज पर प्रतिध्वनि के पहुँचने में लगे समय के अनुसार घूमता है। वास्तव में प्रतिध्वनि के प्रत्येक आवेग के प्रत्युत्तर में स्टाइलस केवल एक चिन्ह अंकित करता जाता है। अतः



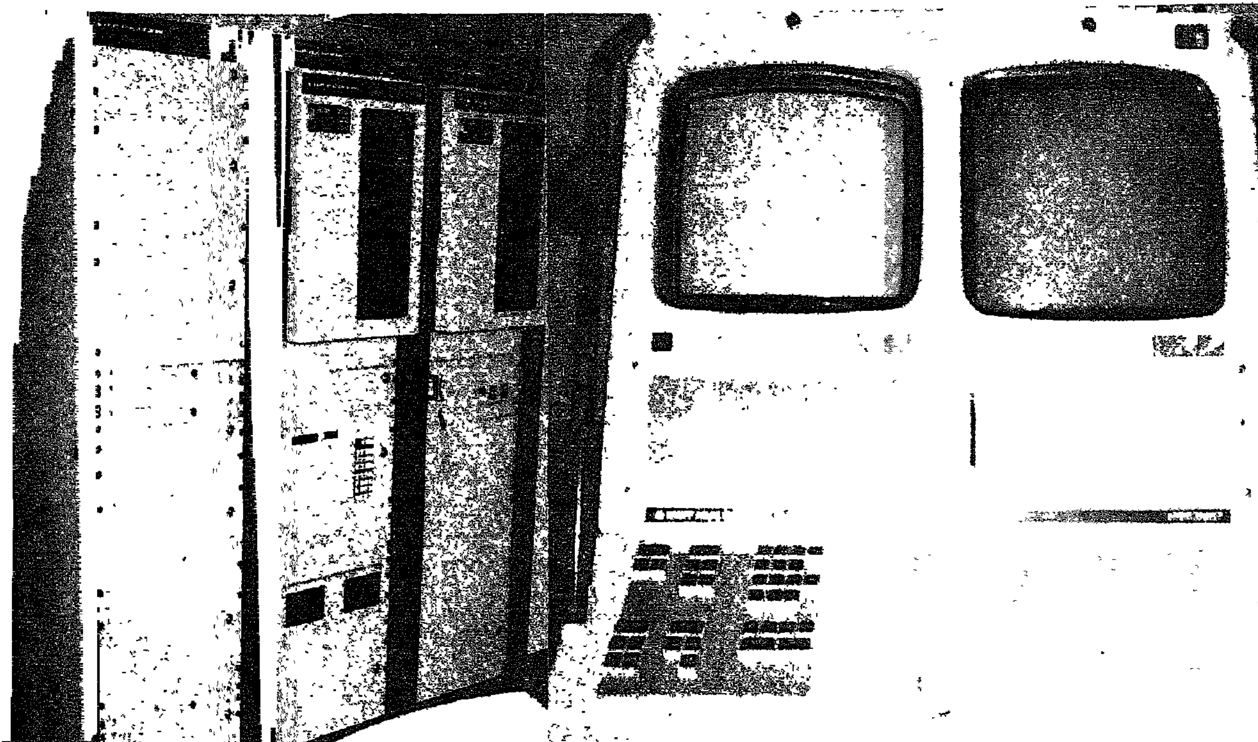
चित्र 30 : 59 ध्वनि पुंजों के प्रयोग से पानी की गहराई के दोगुने क्षैतिज तल को माप त्रिविमीय तलीय संरचना की जानकारी।

एक के बाद एक तीव्र वेग से वापस आती ध्वनि तरंगों से समुद्र तल की तस्वीर रिकार्डर पर अंकित होती जाती है।

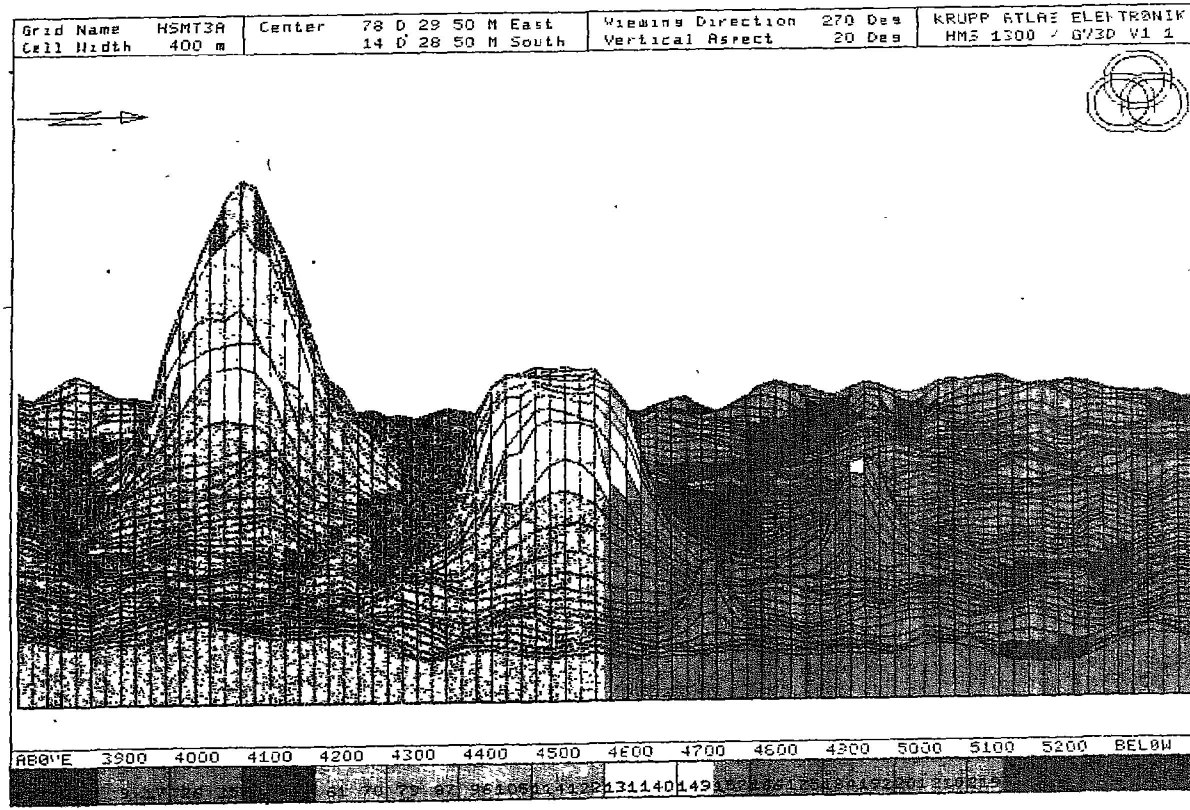
एक पुंज वाली प्रतिध्वनि के प्रयोग से बने एकोसाउन्डर ने मध्य हिंद महासागर में लगभग 4,20,000 लाइन किलोमीटर आंकड़े एकत्र किये हैं। इन आंकड़ों के आधार पर यह पता चला है कि वह क्षेत्र जिसे हम समतल मैदान (Abyssal Plain) कहते हैं वहाँ भी कितने पहाड़, पठार और छोटी खाइयाँ हैं।

## हाइड्रोस्वीप (HYDRO SWEEP)

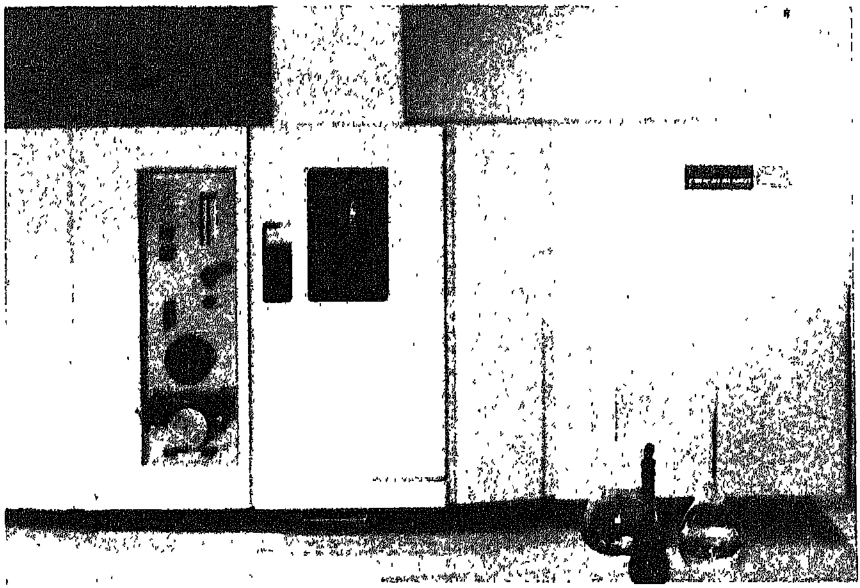
जब एक ध्वनि पुंज भेजकर इतनी जानकारी एकत्र हो सकती है तब



चित्र 31 : हाइड्रोस्पीय यंत्र : चलती सागर–कन्या के साथ अंकित होती संरचना पर्दे पर, संयंत्र का इलेक्ट्रानिक ढांचा (बायें)




चित्र 32 : हाइड्रोमैप द्वारा तैयार किया गया मध्य हिंद महासागर का एक त्रिविमीय मानचित्र विभिन्न रंग, विभिन्न गहराइयो के सूचक हैं।



चित्र 33 : आई.सी.पी.–ए.ई.एस. रासायनिक जाँच हेतु प्रयुक्त उपकरण।

अगर ज़्यादा ध्वनि पुंज भेजे जाएँ तो निश्चित ही अधिक विस्तृत जानकारी मिल सकेगी। कई **ध्वनि पुंजों** (Multibeam) का प्रयोग करते हुए अनेकों अत्याधुनिक एकोसाउन्डर बनाए गए–36 पुंजों वाले, 59 पुंजों वाले, 116 पुंजों वाले।

**सागर-कन्या** पर 1990 में लगे बहुपुंजीय एकोसाउन्डर में एक की जगह 59 ध्वनि तरंगें समुद्र तल से टकराकर तथा परावर्तित होकर वापस आती हैं (चित्र 30)। लगातार आती इन तरंगों से तल की त्रिविमीय (Three Dimensional) तस्वीर का पता चलता है।

हाइड्रोस्वीप (चित्र 31) का प्रयोग दस से दस हज़ार मीटर तक की गहराई के लिए किया जा सकता है। पानी की विभिन्न तहों की विभिन्न ध्वनि आवृत्तियों से निपटने के लिये यह यंत्र एक संशोधन स्वतः (Automatic) कर लेता है। इस यंत्र द्वारा जहाज़ के चलने के साथ-साथ मैगनेटिक टेप में

आंकड़े एकत्र होते रहते हैं। बाद में इसके सहयोगी यंत्र **हाइड्रोमैप** द्वारा इस टेप को पढ़कर क्षेत्र के विस्तृत तलीय मानचित्र बनाते जाते हैं (चित्र 32)। इस यंत्र की क्षमता पानी की गहराई के दो गुने क्षैतिज तल को माप सकने की है। अर्थात् अगर पानी 50 मीटर गहरा है तो यह 100 मीटर क्षेत्र और अगर पानी 5 हज़ार मीटर गहरा है जो यह यंत्र 10 हज़ार मीटर क्षेत्र की संरचना एक बार में बता सकता है।

बहुधात्विक पिंडों के क्षेत्र में तलीय संरचना की जानकारी खनन प्रौद्योगिकी में महत्त्वपूर्ण है। हाइड्रोस्वीप की सहायता से हमारे वैज्ञानिकों ने समस्त **खनन-क्षेत्र** की तलीय संरचना 6 अभियानों को भेजकर प्राप्त कर ली है।

## बहुधात्विक पिंडों की रासायनिक जाँच

बहुधात्विक पिंडों में प्रत्येक धातु का प्रतिशत अलग-अलग ज्ञात करने के लिए उनकी रासायनिक जॉच की जाती है। इन पिंडों की संरचना छिद्रमय होने के कारण लगभग 30% तक पानी इन छेदों में भर जाता है। अतः किसी भी तरह की रासायनिक जॉच के लिए इन्हें पहले हवा में अच्छी तरह सुखाते हैं तथा ऑवन (Oven) में 100–110° सेंटीग्रेट ताप पर लगभग 15 घंटे सुखाने के बाद रासायनिक जाँच के लिये प्रयोग करते हैं। पिडों में निकिल, कोबाल्ट की मात्रा बहुत कम होने के कारण इनकी रासायनिक जॉच में बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है क्योंकि इसी जाँच द्वारा हम सम्पूर्ण खनन में कुल धातुओं का आकलन कर सकते हैं।

पाउडर को अम्लों में पूरी तरह घोलकर अतिसंवेदनशील यंत्रों जैसे— **एटामिक एबजार्बशन स्पैक्ट्रोफोटोमीटर** (A.A.S.) और **इन्ड्यूस्ड कपुल प्लाज़्मा-एटामिक ईमिशन स्पेक्ट्रोफोटोमीटर** (ICP-AES) (चित्र 33) द्वारा जाँच करते है। बगैर अम्ल में घोले पाउडर को सीधे ही **एक्स रे फ्लोरेसेन्स** (XRF) उपकरण द्वारा भी रासायनिक जॉच की जाती हैं।

# 5

# खनिज सम्पदाओं का मूल्यांकन

खनन-क्षेत्र अंकित करने के लिये खनिज सम्पदाओं का मूल्यांकन (Evaluation) करना बहुत जरूरी है। इसके लिए सबसे पहले क्षेत्र का विस्तृत सर्वेक्षण करना होता है। बहुधात्विक पिंडों के संसाधन आकलन (Resource Evaluation) के लिए सर्वेक्षण द्वारा क्षेत्र में 3 बातों के आंकड़ों (Data) की आवश्यकता होती हैं :—

1. तलीय नमूने एकत्र करके पिंड का प्रति वर्ग मीटर में किलोग्राम भार (Weight of Nodules $Kg/m^2$—: Abundance)
2. इन पिंडों की रासायनिक जॉच द्वारा इनमें उपस्थित निकिल, कॉपर कोबाल्ट, व मैंगनीज़ का प्रतिशत (Chemistry of Trace Metals Grade)
3. तलीय संरचना (Bottom Topography or Bathymetry) की विस्तृत जानकारी।

वह क्षेत्र जहाँ पर ये धात्विक पिंड उपस्थित हैं **प्राइम एरिया** (Prime Area) कहलाता है। प्राइम एरिया में उपस्थित धात्विक पिंड आर्थिक रूप से महत्त्वपूर्ण हो भी सकते हैं और नहीं भी। इस प्राइम एरिया का केवल वह हिस्सा जहॉ पर उपस्थित पिंडों का आर्थिक लाभ की दृष्टि से खनन किया जा सके **रिज़र्व** (Reserve) कहलाता है। इसका मतलब यह है कि **प्राइम एरिया** का केवल कुछ अंश ही खनन-योग्य क्षेत्र हो सकता है। वास्तव में बहुधात्विक पिंडों को अभी भी **संभावित भंडार** (Potential Reserve) ही कहा जा सकता है। इनमें वह हिस्सा जिसका कुछ वर्षों के भीतर ही खनन किया

जा सकता है **अनुसीमान्त भंडार** (Paramarginal Deposits) कहलाता है। बाकी के भंडार को **उपसीमान्त भंडार** (Submarginal Deposit) कहते हैं। उपसीमान्त भंडार वर्तमान में तो आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं होते हैं। 25 या 30 वर्षों बाद कभी बढ़ती मांग के कारण धातुओं का कम प्रतिशत भी आर्थिक दृष्टि से लाभकारी बन सकता है। ऐसे में कुछ वर्षों बाद ये उपसीमांत भंडार ही अनुसीमान्त बन सकते हैं।

प्राइम एरिया का वह भाग जहाँ पर उपस्थित पिंडों का भार 5 किलोग्राम प्रतिवर्गमीटर ($5kg/m^2$) से अधिक हो तथा इनमे उपस्थित कोबाल्ट, निकिल एवं कॉपर की सम्मिलित मात्रा 2% से अधिक हो **खनन-क्षेत्र** हो सकता है। इसके अतिरिक्त क्षेत्र की **तलीय संरचना** (Bottom Topography) का समतल होना भी खनन-क्षेत्र अंकित करने में उतना ही अधिक महत्त्वपूर्ण है। समुद्र के पठारी क्षेत्रों में पिंडों का औसत भार अधिकांशतः बहुत अधिक होता है परन्तु इनकी ढलानें (Slope) बहुत अधिक ढालू (Steep) होने के कारण कभी-कभी लगभग 80% भाग खनन के योग्य नहीं होता। ऐसा ढालू क्षेत्र खनन संयंत्रों (Mining Equipment) को बहुत हानि पहुँचा सकता है। खनन हेतु सामान्यतः समतल मैदानों को प्राथमिकता दी जाती है जहाँ पर्वत, पठार एवं बड़े गड्ढ़े जैसी बाधाएँ न हों। भारतीय वैज्ञानिकों का अनुमान है कि तलीय संरचना में 150 मीटर से अधिक उतार-चढ़ाव वाले क्षेत्र में खनन संयंत्र लगाना संभव नहीं है और न ही उन क्षेत्रों में जहाँ पर ढाल का कोण 10° से अधिक हो।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान के वैज्ञानिकों ने सबसे पहले मध्य हिंद महासागर बेसिन (0°—30° दक्षिण अक्षांश एवं 70°—90° पूर्व देशांतर) को 1° के वर्ग में (लगभग 100 कि.मी.) विभाजित किया। प्रत्येक वर्ग में षटकोण (Hexagonal Pattern) पर 5–7 बूमेंरैग (जिनमें से 2 फोटोबूमेरैंग) द्वारा तलीय नमूने एकत्र किए। बेसिन के उत्तरी भाग में यह पिंड अनुपस्थित या बेहद कम, मध्य में अधिक और दक्षिण में सबसे अधिक अंकित किए गए। इन आंकड़ों के आधार पर **प्राइम एरिया** या वह

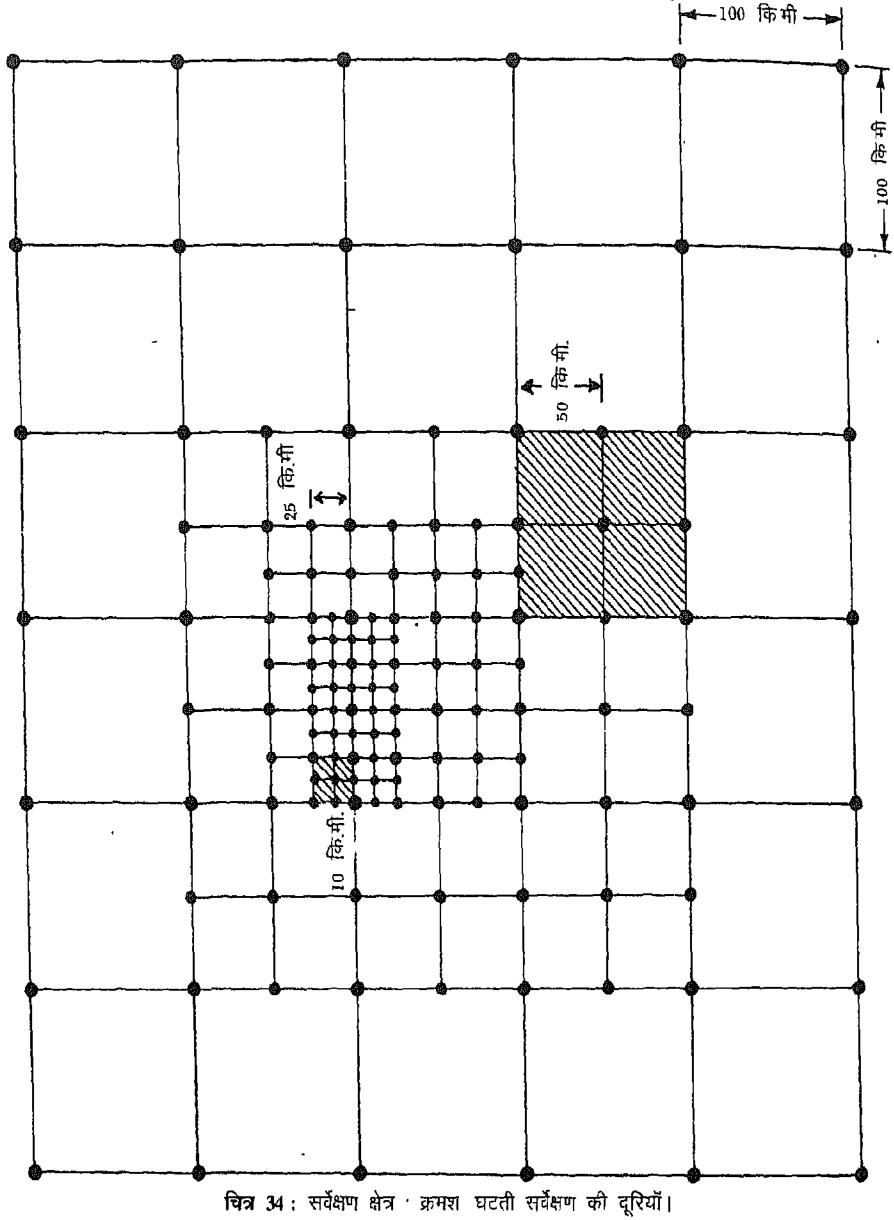
(10° से 20° दक्षिण अक्षांश के बीच) महत्त्वपूर्ण क्षेत्र अंकित कर लिया गया जिनमें ये पिंड उपस्थित थे।

द्वितीय चरण में सर्वेक्षण सिर्फ **प्राइम एरिया** में सीमित था। अब सर्वेक्षण की दूरी 1 वर्ग की जगह आधा वर्ग या लगभग 50 किलोमीटर घटाकर तलीय नमूने एकत्र किये गए। इन नमूनों या पिंडों को सुखाकर व पाउडर बनाकर भारत की कई क्षेत्रीय प्रयोगशालाओं के सहयोग से इसकी रासायनिक जाँच की गई। कम से कम 3 प्रयोगशालाओं द्वारा भेजे गए रासायनिक जॉच के परिणामों का औसत निकालकर वह क्षेत्र अंकित किया गया जहॉ पर निकिल, कोबाल्ट, व तांबा 2% से अधिक था।

तीसरे चरण में सर्वेक्षण की दूरी घटाकर 25 किलोमीटर व पुनः 10 किलोमीटर कर दी गई (चित्र 34)। स्टेशनों* के बीच की दूरी घटाने से इनके प्रति वर्ग किलोमीटर भार में हुए परिवर्तन काफी महत्त्वपूर्ण थे जबकि पिंडों में उपस्थित धातु की प्रतिशतता में कोई विशेष अंतर नहीं पाया गया। तात्पर्य यह है कि पिंडों का बिखराव बहुत छितरा हुआ (Patchy) था जबकि धातु की प्रतिशतता बहुत बडे क्षेत्र में लगभग वैसी ही पाई गई। कुछ स्थानों पर पिंडों की अधिकता का आभास होने पर धातुकर्म के लिये उस स्थान से ड्रेज द्वारा अधिक मात्रा में इन्हें एकत्र किया गया।

मार्च 1982 तक विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय अभियानों द्वारा मध्य हिंद महासागर के 56 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में से कुल 3 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र सर्वेक्षित कियां गया था। इस 3 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में मात्र 45 स्टेशनों पर आंकड़े उपलब्ध थे। भारतीय वैज्ञानिकों ने सतत् प्रयास करके 1986 के अंत तक 44 लाख किलोमीटर क्षेत्र का सर्वेक्षण पूरा कर लिया। इस समय तक इस क्षेत्र में 1400 स्टेशन (6,700 बूमैरैंग आपरेशन) एवं 3.5 लाख लाइन किलोमीटर गहराई संबंधी आंकड़े एकोसाउन्डर द्वारा एकत्र कर

*अक्षांश व देशांतर रेखाओं के बीच वह स्थान जहां से तलीय नमूने एकत्र किये जाते हैं।




**चित्र 34 :** सर्वेक्षण क्षेत्र · क्रमश घटती सर्वेक्षण की दूरियाँ।

लिये गए। इन आंकड़ों के आधार पर सांख्यिकी विधियों द्वारा गणना करके 3 लाख वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र—**खनन-क्षेत्र** (Application Area or Mining Area) निर्धारित किया गया। इस क्षेत्र में खनन संबंधी निम्न तीनों शर्तें पूरी होती थीं :—

1. पिंडों का औसत भार 5 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर से अधिक था;
2. इनमें उपस्थित निकिल, कोबाल्ट व कॉपर की सम्मिलित मात्रा 2% से अधिक थी;
3. तलीय संरचना अपेक्षाकृत समतल थी।

बाद में (1990 से 1992 के बीच) हाइड्रोस्वीप द्वारा खनन क्षेत्र का अति विस्तृत तलीय सर्वेक्षण कर लिया गया।

खनन क्षेत्र में पिंडों के आकलन के लिए मुख्यतः तीन विधियों का प्रयोग किया जाता रहा है :—

1. ग्लोबल एस्टीमेशन विधि (Global Estimation Method);
2. प्राइम एरिया आकलन विधि (Prime Area Estimation Method); एवं
3. ग्रिड आकलन विधि (Grid Estimation Method)।

ग्लोबल एस्टीमेशन विधि इस कल्पना पर आधारित है कि उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर ही संसार के सभी महासागरों में पिंडों का आकलन संभव है। प्राइम एरिया आकलन विधि में पूर्व ज्ञान, उपलब्ध आंकड़े एवं भू-विज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर उन क्षेत्रों को ढूंढने का प्रयास किया जाता है जहाँ पर इन पिंडों का भार व धातु की मात्रा अधिक हो। इस विधि के अनुसार भू-वातावरण की जिन परिस्थितियों में समुद्र के एक क्षेत्र में ये पिंड प्राप्त होते हैं, वही परिस्थितियाँ अन्य क्षेत्रों में होने पर वहाँ भी ये मिलने चाहिए। इसी सिद्धांत का प्रयोग करते हुये मध्य हिंद महासागर को सर्वेक्षण हेतु प्राथमिकता दी गई थी। वहॉ पर भू-वातावरण की परिस्थितियाँ, जैसे—ऊपर से आती मिट्टी की नगण्य दर, अन्तर्जलीय धाराओं का प्रभाव एवं तलीय मिट्टी का प्रकार (Sediment Type) आदि उत्तरी प्रशांत महासागर के समान थीं, जहाँ पर यह पिंड बहुतायत से मिलते हैं।

ग्लोबल एस्टीमेशन एवं प्राइम एरिया एस्टीमेशन दोनों विधियाँ इस कल्पना पर आधारित हैं कि पिंडों का भार एवं इसमें उपस्थित धातुओं की मात्रा दोनों ही एक दूसरे पर निर्भर न होकर स्वतंत्र हैं। ग्रिड आकलन विधि में इस तरह की कोई भी कल्पना नहीं की जाती है बल्कि उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर ही गणनाएँ की जाती हैं।

बूमेरैंग द्वारा एकत्रित भार एवं रासायनिक जाँच संबंधी आंकडों की कम्प्यूटर द्वारा कोरिलेशन (Correlation), वेरियोग्राम एवं क्रिगिंग (Krigging) आदि सांख्यिकी विधियों द्वारा गणनाएँ की गईं। समस्त प्राइम एरिया को चौथाई (1/4) डिग्री वर्ग के खण्डों में विभाजित करके प्रत्येक खण्ड में पिंडों का औसत भार (Abundance), धातु की कुल मात्रा (Grade) एवं कुल टनेज का आकलन किया गया। समस्त क्षेत्र (Area) को वहाँ पर उपस्थित पिंडों के भार से गुणा करके टनेज पता चल जाती है। इन आंकड़ों से शुष्क धातु की मात्रा पता करने के लिये टनेज को पुनः 0.7 से गुणा कर लेते हैं क्योंकि बहुधात्विक पिंडों में औसत 30% तक पानी होता है। वह सभी वर्गखण्ड जिनमें पिंडों के खननं संबंधी शर्तें पूरी होती थीं उन्हें खनन क्षेत्र के लिए चुना गया। **इंजीनियर्स इण्डिया लिमिटेड** के सहयोग से उपर्युक्त वर्णित सांख्यिकी विधियों द्वारा इन क्षेत्रों को कन्फर्म (Confirm) कर लिया गया।

समुद्री कानून की शर्त के अनुसार, आवंटित खनन क्षेत्र (1,50,000 वर्ग किलोमीटर) का 20% अर्थात् 30,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पंजीकरण के कुछ वर्ष बाद छोड़ना है। इसका आशय यह होता है कि प्रथम खनन संयंत्र जिस क्षेत्र में लगाया जाए वह सबसे अच्छा हो। जिन खण्डों में पिंडों का भार व धातु की मात्रा अपेक्षाकृत कम तथा तलीय संरचना ज़्यादा ऊबड़-खाबड़ है उन खण्डों को जल्दी ही छोड़ने की बात सोची जा रही है। खनन क्षेत्र आवेदन करने की एक अच्छी बात यह है कि सभी क्षेत्र एक साथ होने जरूरी नहीं हैं। अतः समस्त प्राइम एरिया में से भारतीय खनन क्षेत्र दो भागों में चुना गया है।

# 6

# मध्य हिंद महासागर और बहुधात्विक पिंड–मूलभूत अनुसंधान (Basic Research)

खनन किसी भी तरह के भण्डारों की अन्तिम प्रक्रिया है। इससे पहले इन भण्डारों के विषय में अनेक मूल तथ्यों की स्पष्ट जानकारी आवश्यक होती है। उदाहरण के लिये बहुधात्विक पिंडों को ही लें। समुद्रतल पर इन पिंडों का विस्तार, इसमें उपस्थित धातुओं की मात्रा व इनकी वृद्धि की दर जानना आवश्यक होता है। चूंकि तलीय संरचना अन्तर्जलीय धाराओं, तलछट की मिट्टी (Bottom Sediment) एवं पिंडों को प्रभावित करती है अतः इसके विषय में अनुसंधान की जरूरत होती है। खनन का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा इससे संबंधित जानकारी भी पहले ही एकत्र कर लेना ज़रूरी है।

• बहुधात्विक पिंडों में उपरोक्त विषयों को लेकर **चैलेन्जर** द्वारा 1873–76 में हुई इनकी खोज के समय से ही शोध-कार्य जारी है। **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा** के वैज्ञानिकों ने इन पिंडों के हिंद महासागर में खनन-क्षेत्र तलाशने के साथ-साथ लगभग 10 वर्षों में अनेकों तथ्य खोजे हैं जिनका वर्णन हम यहाँ कर रहे हैं।

महासागर के हर क्षेत्र–जलमग्न पठारों की शिखाओं से लेकर समुद्री नदियों द्वारा समतल किये मैदानों तक में ये बहुधात्विक पिंड बहुतायत से मिलते हैं। वे पिंड जिनमें निकिल, कोबाल्ट व तांबे की मात्रा आर्थिक रूप से

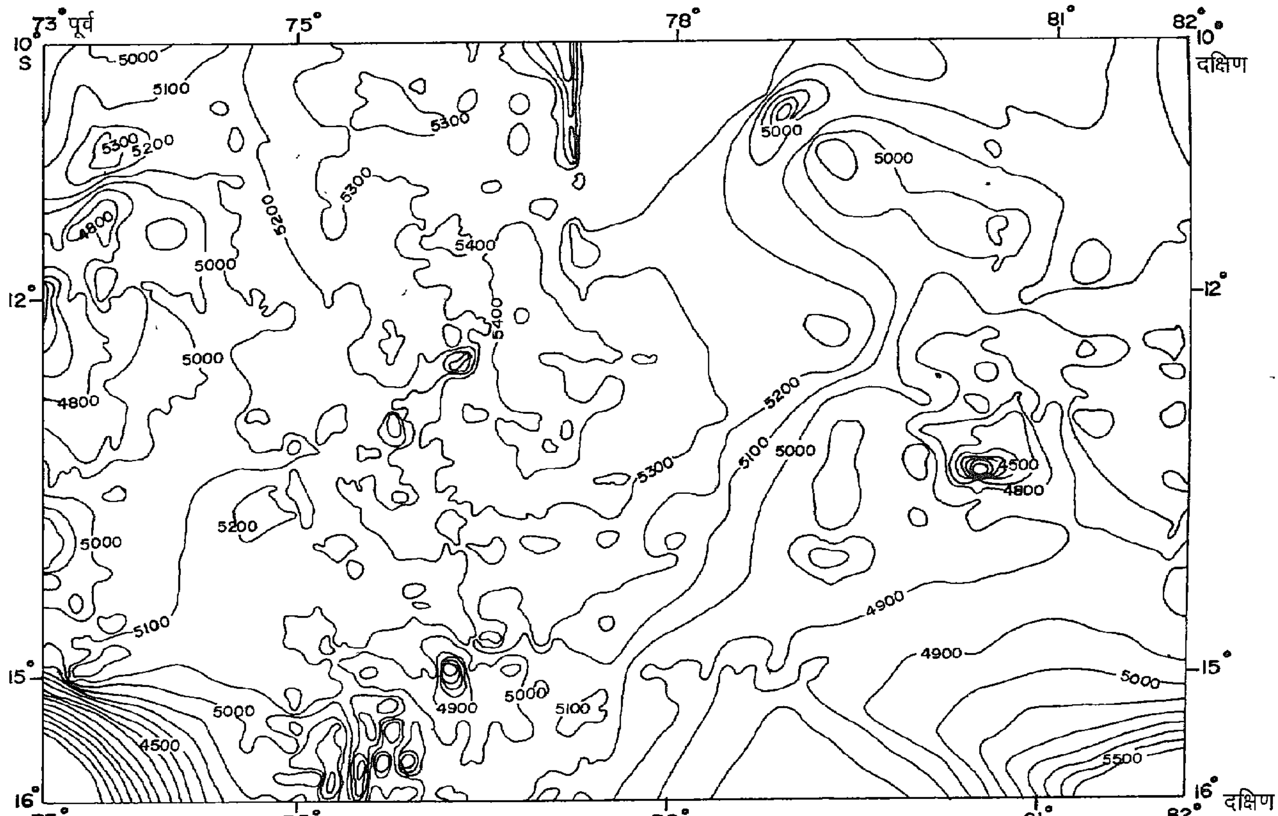
महत्त्वपूर्ण है, अधिकांशतः समुद्र के बहुत गहरे एवं समतल क्षेत्रों में ही प्राप्त होते हैं। इन स्थानों पर भूमि से पहुँचने वाली मिट्टी की दर नगण्य होती है। अतः ये पिंड इन क्षेत्रों में निर्बाध रूप से विकसित होते हैं। हिंद महासागर का मध्य क्षेत्र (Central Indian Basin) इस दृष्टि से इनके विकास के लिए उपयुक्त है और वहाँ पर ये पिंड बहुतायत से मिलते हैं। आइए, अब हम थोड़ी सी जानकारी मध्य हिंद महासागर के बारे में भी कर लें।

## मध्य हिंद महासागर बेसिन (Central Indian Ocean Basin)

अन्य सभी महासागरों की तुलना में सबसे जटिल (Complicated) संरचना वाले हिंद महासागर का मध्य भाग **मध्य हिंद महासागर बेसिन** कहलाता है। यह बेसिन मध्य भारतीय पर्वतमाला (Mid Indian Ridge) एवं 90° पूर्व पर्वतमाला (90° East Ridge) के बीच तथा दक्षिण में दक्षिण-पश्चिम भारतीय पर्वतमाला (South-West Indian Ridge) तक स्थित है। ऐसा समझा जाता है कि इस बेसिन की उत्पत्ति गंगा एवं ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी को सघन समुद्री धाराओं (Turbidity Currents) द्वारा दक्षिण तक फैला देने के कारण हुई है।

एक पुंजीय एकोसाउन्डर द्वारा मध्य हिंद महासागर में लगभग 4,24,000 लाइन किलोमीटर आंकड़े एकत्र किये गये हैं। इन आंकड़ों का विस्तृत अध्ययन इस क्षेत्र में कई नयी जलमग्न पर्वत श्रृंखलाएँ, ट्रांसफार्म फाल्ट (Transform Fault) और फ्रैक्चर ज़ोन्स (Fracture Zones) दर्शाता है।

लगभग 15 समुद्री मील के अंतराल पर सर्वेक्षण किये गए इन आंकड़ों से पता चलता है कि यह क्षेत्र पूर्व एवं पश्चिम की ओर कम गहरा है क्योंकि यहाँ पर कई पठार हैं। पूर्व एवं पश्चिम के पठारों के बीच में अधिकांशतः समतल मैदान हैं। इस क्षेत्र की औसत गहराई 5100 मीटर है (चित्र 35)। बेसिन की पश्चिमी दिशा में यह गहराई कम है जो क्रमशः पूर्व की ओर बढ़ती जाती है। इस क्षेत्र में अनेक पठार और समुद्री पहाड़ियाँ देखी जा




चित्र 35 : मध्य हिंद महासागर : आवेदन क्षेत्र के आस-पास की तलीय सरचना (एक पुंजमापी एकोसाउन्डर द्वारा एकत्रित आकडो के आधार पर) (चित्र: *कोडागली*)

सकती हैं। इनमें से 90% संरचनाओं का झुकाव कोण (Slope Angle) 0—3° है। क्षेत्र की सबसे कम गहराई 2,900 मीटर व पठारों की अधिकतम ऊँचाई 1,500 मीटर है। सम्पूर्ण क्षेत्र में लगभग 39 शंक्वाकार (Conical) पठार हैं जो अधिकांशतः फ्रैक्चर जोन के आस पास फैले हुए हैं।

हाइड्रोस्वीप द्वारा इन सभी संरचनाओं का पुनः अध्ययन करने पर अनेकों नये पठार व फ्रैक्चर ज़ोन देखने को मिले हैं। इन पठारों में से अधिकतर पठारों का झुकाव कोण 35° तक मिलता है। इन संरचनाओं की जानकारी खनन्-यंत्रों के विकास में बहुत सहायक होती है। यद्यपि सम्पूर्ण खनन-क्षेत्र का हाइड्रोस्वीप द्वारा सर्वेक्षण पूरा कर लिया गया है, तथापि इन्हें प्रकाशित होने में थोड़ा समय लगने की आशा है।

गंगा, ब्रह्मपुत्र आदि नदियाँ लगभग 1670 लाख टन मिट्टी प्रति वर्ष बंगाल की खाडी में बहाकर ले आती हैं। मध्य हिंद महासागर में 9° – 17° दक्षिण अक्षांश क्षेत्र में बहुधात्विक पिंड बहुतायत से प्राप्त होते हैं। इस क्षेत्र की मिट्टी में एक विशेष प्रकार के सूक्ष्म जन्तु **रेडियोलेरिया** एवं सूक्ष्म पौधे **डायाटम** की संख्या बहुत अधिक होती है। इसलिए यह मिट्टी रेडियोलेरियन एवं डायाटम ऊज़ कहलाती है। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा 30% से अधिक होने पर इसे ऊज़ (Ooze) कहते हैं तथा 30% से कम होने पर क्ले (Clay) कहते हैं। 17° अक्षांश से दक्षिण की ओर मिट्टी **रेड पिलैजिक क्ले** (Red Pelagic Clay) कहलाती है। बेसिन के पश्चिम की ओर अपेक्षाकृत कम गहरे स्थानों में कहीं-कहीं पर कैल्शियम का प्रभाव (Calcareous Ooze) देखने को मिलता है। 4600 मीटर गहराई तक पहुँचते-पहुँचते सारा कैल्शियम पानी में घुल जाता है। इस गहराई को **कार्बोनेट प्रतिपूर्ति गहराई** (Carbonate Compensation Depth) कहते हैं, जिसके नीचे पाए जाने वाले पिंडों में आर्थिक रूप से महत्त्वपूर्ण धातुओं (निकिल, कोबाल्ट, तांबा व मैंगनीज़) की मात्रा प्रायः अधिक होती है। ये पिंड सामान्यतः उपर्युक्त चारों ही प्रकार की मिट्टी वाले क्षेत्रों में मिलते हैं। वह क्षेत्र जहाँ पर मिट्टी जमा होने की दर (Sedimentation Rate) नगण्य होती है वहाँ पर ये निर्बाध रूप से विकसित होते हैं।

मध्य हिंद महासागर की संरचना समझने के बाद अब बारी है बहुधात्विक पिंडों के बारे में कुछ मूल बातों की जानकारी प्राप्त करने की। जैसे इनका विस्तार, रंग, आकार आदि, जिनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

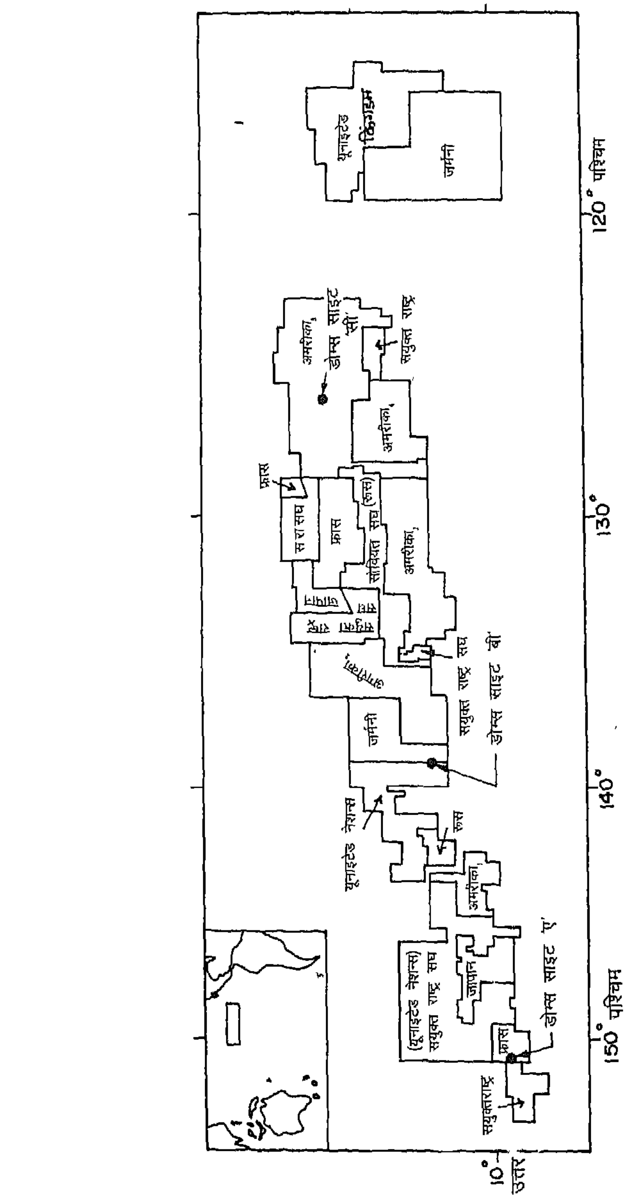
## विस्तार

मध्य हिंद महासागर में बूमेरैंग ग्रैब द्वारा एकत्र किये गए विस्तृत आंकड़ों से पता चलता है कि इस क्षेत्र में कहीं पर बहुधात्विक पिंड 1 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर से भी कम हैं तो कुछ मीटर की ही दूरी पर 25 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर से भी अधिक। सर्वेक्षण की दूरियाँ 10 किलोमीटर के अंतराल तक कम करने पर स्पष्ट हुआ है कि सैकडों किलोमीटर का क्षेत्र ऐसा भी है जहाँ पर इन पिंडों का विस्तार 5 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर या इससे अधिक है। मध्य हिंद महासागर की मैदानी घाटियों में इनका औसत भार (6.94 किलोग्राम प्रति वर्ग मीटर) पठारों एवं उनकी ढालों पर इनके औसत भार (2. 89 किलोग्राम प्रति-वर्ग मीटर) की अपेक्षा काफी अधिक पाया गया। बूमेरैंग ग्रैब द्वारा निकाले गए इन पिंडों का औसत भार समतल मैदानों में सबसे कम देखा गया। इसके विपरीत समतल मैदानों के पिंडों में निकिल, और तांबे की मात्रा सबसे अधिक तथा समुद्री घाटियों में सबसे कम पाई गई।

प्रशान्त महासागर के उत्तरी भाग में ये पिंड प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में लगभग 10 किलोग्राम या इससे अधिक मात्रा में मिलते हैं। अमरीका के केन्द्रीय भाग के समीप समुद्रतल से लेकर **मैरियाना खाई** (Mariana Trench) की दीवार के पास तक, पूर्व से पश्चिम की ओर जाती **क्लियरन-क्लिपरटन पट्टी** (Clarian-Clipperton Zone) में इन पिंडों का महत्त्वपूर्ण सघन विस्तार है। विकसित राष्ट्रों की अनेकों बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने इस पट्टी में खनन-क्षेत्र के अधिकार की मांग की है (चित्र 36)।

## आकार (Size)

ये पिंड अति सूक्ष्म (Microscopic) आकार से लेकर 10 सेमी. से अधिक




चित्र 36 : उत्तरी प्रशांत महासागर के क्लेरियन-क्लिपरटन क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय खनन क्षेत्र।

आकार में पाये जाते हैं। ऐसा संदर्भ है कि **चैलेन्जर** अभियान के समय 850 ग्राम भार वाला पिंड **फिलीपीन्स** द्वीप से लगभग 500 किलोमीटर पहले एक टेलीफोन के तार में लिपटा हुआ मिला था। इस पिंड को अध्ययन के बाद पुनः समुद्र में डाल दिया गया था।

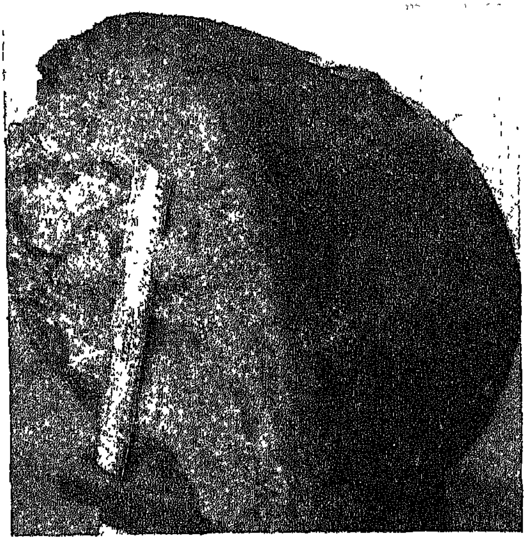
मध्य हिंद महासागर में एकत्रित पिंडों का औसत आकार 2 से 6 सेंमी. के बीच ही मिलता है।

**केन्द्रक** (Nucleus)

इन पिंडों का निर्माण आरम्भ होने के लिए इन्हें एक केन्द्रक के सहारे की जरूरत होती है जिनके ऊपर ये बनना शुरू करते हैं। ये केन्द्रक समुद्रतल पर पड़ी कोई भी वस्तु हो सकते हैं। जैसे–पुराने पिंडों के ही टूटे हुए टुकड़े या शार्क मछली के दाँत, ज्वालामुखी द्वारा छितराए **प्यूमिस** (Pumice) चट्टान के टुकड़े, फास्फोराइट, सिलिका या कोई भी पत्थर केन्द्रक बन सकता है। चैलेन्जर अभियान के समय वैज्ञानिकों ने इन्हें 4 इंच लम्बे जीवाश्म हुई शार्क मछली के दाँत के ऊपर बनते प्राप्त किया था। भारतीय वैज्ञानिकों ने भी **मिंक व्हेल** के कान की हड्डी के टुकड़े के चारों ओर इन्हें बनते पाया। अन्तर्जलीय धाराएँ इन केन्द्रकों का इधर-उधर विस्थापन करती रहती हैं। इन केन्द्रकों के ऊपर सामान्यतः 2 से 4 सेंटीमीटर धात्विक हाइड्रॉक्साइड की तह जमकर कालांतर में इन्हें पिंड बना देती है। अक्सर बहुत बड़े केन्द्रक पर जमी कुछ मिलीमीटर पतली हाइड्रॉक्साइड की तह मिलती है। इस तरह की संरचनाओं को **बहुंधात्विक क्रस्ट** (चित्र 37) की संज्ञा दी गई है।

**आकृति** (Shape)

टेढ़े-मेढ़े ये पिंड कई आकृतियों में मिलते हैं तथा इनकी सतह चिकनी या खुरदरी होती है। इनकी आकृति, आकार व संरचना (Composition), केन्द्रक एवं तलीय मिट्टी पर बहुत कुछ निर्भर करती है। आकार बनाने में अन्तर्जलीय धाराओं का भी योगदान रहता है जिनके प्रभाव से कभी-कभी ये तोप के गोले

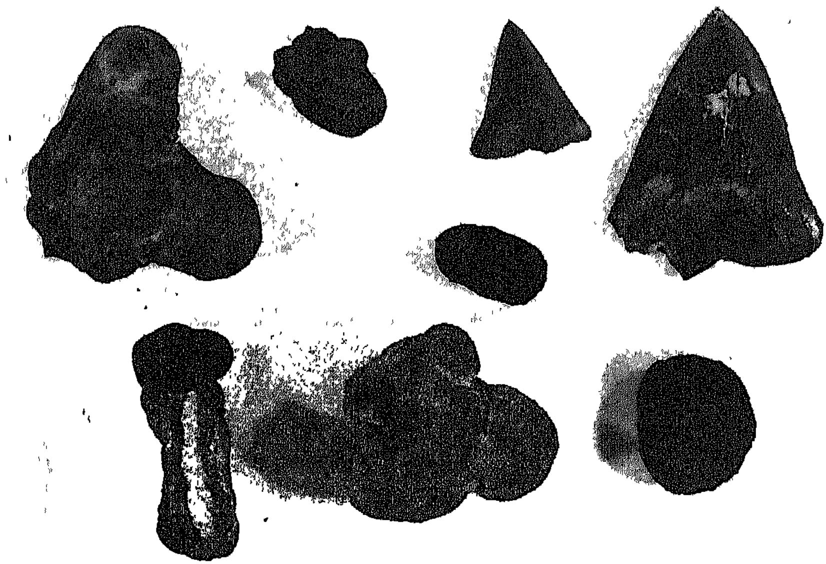


**चित्र 37 :** बडी चट्टान जैसे केन्द्रक पर जमीं पतली धात्विक पर्तों के कारण इन्हे क्रस्ट नाम दिया गया।

जैसे एकदम चिकने एवं गोल हो जाते है। कभी इनकी सतह बिल्कुल खुरदरी मिलती है। इनकी आकृतियों की तुलना लोगों ने प्याज़, आलू, बंदगोभी व बन्दूक की गोली से की है। लम्बाकार, गोल, चपटी, कैप्सूल (Capsule) की जैसी अनेकों आकृतियाँ संसार में महासागरों में अलग-अलग या सम्मिलित रूप में मिलती हैं (चित्र 38)। केन्द्रक की आकृति ग्रहण करने के कारण कभी-कभी ये शार्क के दॉत की तरह भी दिखने लगते हैं। मध्य हिंद महासागर में जहाजों द्वारा फेंकी वस्तुओं जैसे—दियासलाई की तीली व पिन के चारों ओर भी इन्हें बनते देखा गया है। इससे यह सिद्ध होता है कि ये पिंड अभी भी बन रहे हैं और किसी भी केन्द्रक पर बन सकते हैं। इस क्षेत्र में अब तक एक दर्जन से अधिक आकृतियों वाले पिंड प्राप्त हुए हैं।

**रंग एवं धातु-मात्रा** (Colour and Metal Content)

मध्य हिंद महासागर में पाए जाने वाले पिंड गहरे भूरे-काले (Dark Brown) या काले (Black) रंग के होते हैं। इनका रंग इनमें उपस्थित लोहे



**चित्र 38 : बहुधात्विक पिंड :** आकार व आकृतियॉं दाया कोना (**ऊपर**) शार्क के दॉंतो पर जमती धात्विक पर्तें। बाया कोना (**नीचे**) अनुप्रस्थ काट मे दर्शित मिट्टी का केन्द्रक।

या मैंगनीज की मात्रा का सूचक है। इनमें लगभग 30 धातुओं की उपस्थिति पाई गई है परन्तु लोहा या मैंगनीज का प्रतिशत सबसे अधिक होता है (तालिका 6.1)। अन्य धातुएँ जिनका प्रतिशत अपेक्षाकृत कम होता है वे इन्हीं दो मुख्य धातुओं जैसा व्यवहार करती हैं। अर्थात् सामान्यतः जिन पिंडों में लौह तत्व की अधिकता है उनमें कोबाल्ट की मात्रा भी अधिक होती है। इन पिंडों में मैंगनीज़ व तांबा अपेक्षाकृत कम होगा और इन पिंडों का रंग गहरा भूरा-काला होगा। दूसरी ओर वे पिंड जिनमें मैंगनीज़ की अधिकता होती है काले रग के होते हैं। इन पिंडों में निकिल और तांबे की मात्रा की अधिकता तथा कोबाल्ट एवं लोहे की मात्रा कम होती है। मैगनीज, निकिल और तांबे की अधिकता वाले पिंड **रेडियोलेरियन-डायाटम ऊज़** में मिलते हैं तथा लौह खनिज की मात्रा **रेड पिलैजिक क्ले** में अधिक प्राप्त हुई है।

## तालिका 6.1

**मध्य हिंद महासागर में धात्विक पिंडों की औसत धातुमात्रा**

| *तत्व* | *न्यूनतम%* | *अधिकतम%* |
|---|---|---|
| मैंगनीज़ | 16 42 | 32.83 |
| लोहा | 4.19 | 16 58 |
| तांबा | 0.28 | 1.64 |
| निकिल | 0.35 | 1.41 |
| कोबाल्ट | 0.07 | 0.18 |
| निकिल+तांबा+कोबाल्ट | 0.82 | 3.69 |
| मैंगनीज़/लोहा अनुपात | 1.12 | 6.24 |
| तांबा + निकिल | 0.67 | 2.94 |
| आर्द्रता | 6.72 | 20 21 |

(**स्रोतः** *वालसंगकर आदि*)

इन पिंडों की सतह बहुत छिद्रमय (Porous) होती है जिसके कारण इनमें पिंडों के कुल भार का 30% तक पानी समा सकता है। मध्य हिंद महासागर के पिंडों में समाहित निकिल, कोबाल्ट एवं तांबे की प्रतिशत मात्रा किन्हीं क्षेत्रों में बहुत कम (0.82%) तो कहीं पर बहुत अधिक (3.70%) तक है। (तालिका 6.1)। इन पिंडों की तुलना, धातुमात्रा में उत्तरी पूर्व प्रशान्त महासागर से की जा सकती है (तालिका 6.2) जहाँ पर अनेकों बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने खनन हेतु आवेदन किये हैं।

## तालिका 6.2

**मध्य हिंद महासागर व उत्तरपूर्व प्रशान्त महासागर से प्राप्त पिंडों में औसत धातुमात्रा**

| तत्व | आकार | | | | | | | उत्तर पूर्व भूमध्य प्रशान्त महासागर |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 2 सेमी. से कम | 2 से 4 सेमी. | 4 से 6 सेमी. | 6 से 8 सेमी. | 8 से 10 सेमी. | 10 सेमी. से ऊपर | कुल | |
| आर्द्रता | 11.33 | 11.77 | 12.49 | 14.39 | 15.30 | 15.64 | 12.65 | — |
| मैंगनीज% | 29 08 | 28.26 | 27.19 | 23 86 | 20.89 | 22 55 | 26.83 | 22.40 |
| लोहा% | 6.69 | 7.44 | 8 09 | 9.08 | 11.63 | 10.45 | 8 06 | 8.10 |
| तांबा% | 1.39 | 1.24 | 1.14 | 0.83 | 0.59 | 0.62 | 1.12 | 1.02 |
| निकिल% | 1.23 | 1.13 | 1.04 | 0.80 | 0.60 | 0.69 | 1.03 | 1.16 |
| कोबाल्ट% | 0.11 | 0.12 | 0.11 | 0.12 | 0.14 | 0.14 | 0.12 | 0 25 |
| कोबाल्ट +निकिल+तांबा% | 2.77 | 2.49 | 2.29 | 1.14 | 1.32 | 1.47 | 2.28 | 2.43 |
| मैंगनीज/लोहा अनुपात | 4.48 | 3.98 | 3.60 | 2.77 | 1.92 | 2.23 | 3.63 | 2.76 |
| तांबा + निकिल% | 2.62 | 2.37 | 2.18 | 1.63 | 1 19 | 1 20 | 2.15 | 2.18 |

(स्रोत : *वालसंगकर आदि*)

**निर्माण** (Genesis)

तलीय मिट्टी का इन पिंडों के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। उदाहरणस्वरूप **रेडियोलेरियन ऊज़ मिट्टी** में रहने वाले सूक्ष्म रेडियोलेरिया मरने के बाद डूबना शुरू कर देते हैं। तल पर पहुँचने के बाद वहाँ के पानी के सम्पर्क से इनका विघटन (Decomposition) प्रारम्भ हो जाता है। इनके जैविक खोल (Shells) तांबा, निकिल, जैवीय सिलिका (Biogenic Silica) जैसे तत्वों से बने होते हैं। विघटन के बाद ये तत्व (Element) तलीय मिट्टी के छिद्रों (Pores) में अपनी स्वतंत्र अवस्था में आ जाते हैं। इससे मिट्टी के संपर्क वाले पानी में इन धातुओं का परिमाण (Metal Flux) अधिक हो जाता है। यह स्थिति तब तक बनी रहती है जब तक इस वातावरण में रासायनिक परिवर्तन (Eh व Ph में) होते हैं। इससे स्थल पर उपलब्ध किसी वस्तु को केन्द्रक बनाकर ये स्वतत्र तत्व उसके ऊपर जमना प्रारम्भ कर देते हैं। यह चक्र लगातार चलता रहता है और पिंडों का पर्त-दर-पर्त (Layer-by-Layer) बढ़ना जारी रहता है। इनकी विकास की दर (Rate) बहुत धीमी—लगभग 1–3 मिलीमीटर प्रति दस लाख वर्ष (Million Year) होती है। इनकी अनुप्रस्थ काट (Transverse Section) की अन्दरूनी सतह (Internal Structures) को पॉलिश करके बिल्कुल चिकना बनाकर सूक्ष्मदर्शी यंत्र (Microscope) द्वारा देखने पर ये पर्तें स्पष्ट दिखाई देती हैं।

लाल मिट्टी में प्राप्त पिंडों में धातु-तत्व, समुद्र के पानी से सीधे केन्द्रक पर जमा होने लगते हैं। समुद्री पानी के लगातार संपर्क में रहने के कारण इनकी ऊपरी सतह भी चिकनी हो जाती है। रेडियोलेरियन ऊज़ के संपर्क में बने पिंड खुरदरी सतहवाले तथा निकिल, तांबा व मैंगनीज़ की अधिकता वाले होते हैं। इसका कारण इस ऊज़ के बड़े छिद्र (10°—30° अंगस्ट्रम) कहे जा सकते हैं जिनसे निकलकर धातुएँ जमा होती हैं। ऐसा समझा जाता है कि पिंडों में उपस्थित धातुओं का नियंत्रण साधारणतया इनमें उपस्थित मुख्य खनिजों (Minerals) टोडोरोकाइट, बिरनेसाइट, बेसेराइट एवं वरनेडाइट द्वारा होता है। उदाहरण के लिए मैंगनीज़ खनिज (Manganese Mineral) टोडोरोकाइट

की क्रिस्टल संरचना (Crystal Structure) ऐसी होती है जो अपनी तहों के बीच निकिल, तांबा व जिंक आदि तत्वों के आयनों (Ions) को अपने में आसानी से समाहित कर लेती है। इससे टोडोरोकाइट की उपस्थिति के कारण मैंगनीज़ की अधिकता वाले पिंडों में ये अन्य तत्व भी बढ़ जाते हैं। इन खनिजों का निर्माण तलीय मिट्टी पर निर्भर करता है।

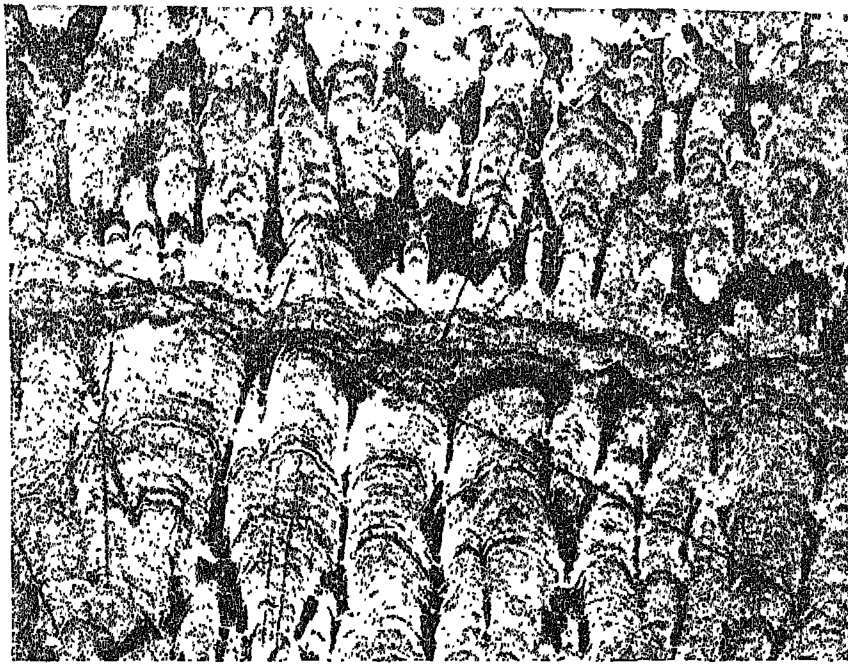
वास्तव में पिंडों का चिकना या खुरदरापन, उनमें समाहित धातुमात्रा, उनका विशेष आकृति लेना आदि एक जटिल व संतुलित रासायनिक अभिक्रिया दर्शाते हैं। मैंगनीज़ व लौह तत्वों का अनुपात (Ratio), इन पिंडों के निर्माण की सामान्य परिस्थिति की सूचना दे सकता है। मध्य हिंद महासागर में यह अनुपात 0.96 से 8.76 तक मिला है। वैज्ञानिकों ने परिणाम निकाला है कि 2.5 या इससे कम अनुपात वाले पिंड सामान्यतः समुद्री पानी के संपर्क में आने से बनते हैं तथा 5 से अधिक अनुपात वाले पिंड तल की मिट्टी द्वारा धातु समाहित (Incorporation) होने का परिणाम है। 2.5 से अधिक और 5 से कम के बीच अनुपात वाले सभी पिंड इन दोनो क्रियाओं का मिश्रण दर्शाते हैं। अर्थात् इन पिंडों का आधा भाग तलीय मिट्टी से प्राप्त हुई धातुओं के कारण तथा आधा भाग समुद्री पानी से संपर्क के कारण बनता है।

### धातु स्रोत (Metal Source)

प्रश्न उठता है कि महासागरों में ये धातुएँ कहाँ से आ जाती हैं? अन्तर्जलीय ज्वालामुखी द्वारा बिखराए पदार्थ में ये धातुएँ प्रचुर मात्रा में होती हैं। इसके अतिरिक्त अन्तरिक्ष से टूटकर समुद्र में गिरी उल्काओं द्वारा, नदियों एवं हवा द्वारा महाद्वीपों (Continents) से क्षरण (Erosion) कर लाई मिट्टी भी धातुओं के स्रोत हैं। समुद्री जीवों के विघटन से भी बहुत सी धातुएँ प्राप्त होती हैं।

## अन्य निर्माण विधि—एक प्रश्न

विश्व के सभी महासागरों में उपरोक्त प्रक्रियाओं द्वारा पिंडों का विकास होता है। कुछ वैज्ञानिक इनकी उत्पत्ति अति सूक्ष्म जीव—बैक्टीरिया द्वारा भी मानते हैं।



**चित्र 39 :** पिंड की अनुप्रस्थ काट का पॉलिश किया स्कैनिंग इलैक्ट्रान माइक्रोस्कोप द्वारा लिया गया चित्र।

माइक्रोस्कोप से पिंडों की आन्तरिक संरचना का अध्ययन करने पर इनमें कई तरह की परतें दिखाई देती हैं :

1. केन्द्रक के चारों ओर एक दूसरे के समानान्तर चलती परतें;
2. किसी अदृश्य बिंदु पर छोटे-छोटे कॉलम बनाकर बढ़ती हुई; एवं
3. छोटे-छोटे गोल चकत्तों के रूप में।

गहरी और हल्की होती क्रमिक लकीरों जैसी ये परतें मैंगनीज़ और लौह तत्वों की बनी होती हैं। ये परतें समुद्री वातावरण में हुए सूक्ष्म रासायनिक परिवर्तनों का परिणाम हैं।

ज़मीन पर पायी जाने वाली एक विशेष प्रकार की संरचना—**स्ट्रोमैटोलाइट्स** (Stromatolites) से पिंडों की अंदरूनी संरचना (चित्र 39) बहुत मिलती जुलती है। स्ट्रोमैटोलाइट्स की उत्पत्ति जैवीय होती है एवं इनकी अनुप्रस्थ

काट में भी ऐसी ही परतें दिखाई देती हैं। अतः पिंडों की संरचना की स्ट्रोमैटोलाइट्स से समानता इनकी जैवीय उत्पत्ति का आभास देती है। स्ट्रोमैटोलाइट्स एक विशेष प्रकार के काई जैसे पौधे एल्गी (Algae) के बढ़ने से बनते हैं। ये छोटे-छोटे पौधे बढ़ते समय अपने आसपास के कणों जैसे फास्फोराइट व अन्य तत्वों को अपने तन्तुओं में बांधकर एक के ऊपर एक करके बढते जाते हैं। कालांतर में ये तन्तु बिल्कुल सड-गल कर अवशेष मात्र रह जाते हैं। जबकि तन्तुओं में बंधे कण उसी आकार में रहकर जीवाश्म (Fossil) बन जाते हैं। ये संरचनाएँ कई विशुद्ध धातुओं जैसे फास्फोराइट का भंडार होती हैं। इन पौधों (एल्गी) को प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा भोजन बनाने के लिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता होती है। समुद्र की गहराई तक प्रकाश पहुँचने की कोई संभावना न होने के कारण पिंडों की पौधों द्वारा उत्पत्ति को पूर्णतया नजर अंदाज कर दिया गया है।

कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि स्ट्रोमैटोलाइट्स जैसी पिंडों की यह उत्पत्ति संभवतः बैक्टीरिया (जो हर तरह के वातावरण में जीवित रह सकते हैं) द्वारा हुई है। इन जीवाणुओं का एक ग्रुप–**लिथोट्रॉपिक बैक्टीरिया** प्रकाश की जगह रासायनिक ऊर्जा का उपयोग कर भोजन बनाते हैं। वातावरण के उन क्षेत्रों में जहाँ सूर्य का प्रकाश पहुँचना कठिन होता है, इन जीवाणुओं का महत्व बेहद बढ़ जाता है। सागर के जलतापीय खनिज भंडार (Hydrothermal Deposit) वाले क्षेत्र में जहाँ ऑक्सीजन या प्रकाश की उपस्थिति असंभव तथा पानी का ताप एवं दाब बहुत अधिक है वहाँ पर सीपी, ट्यूबीलेरियन वर्म आदि बड़े जीव प्राप्त हुए हैं। इनकी इस अचम्भित कर देने वाली उपस्थिति का कारण यही लिथोट्रॉपिक बैक्टीरिया हैं जो इन बड़े जीवों के लिये भोजन निर्माण करते हैं।

हालांकि पिछले सौ से अधिक वर्षों से इन पिंडों पर हो रहे अनुसंधान, केवल कुछ अपवादों को छोड़कर इन पिंडों की उपस्थिति रासायनिक ही मानते हैं। इनकी अंदरूनी संरचनाओं की विशेषाकृति इन पिंडों की जैवीय उत्पत्ति पर कुछ और अध्ययन की मांग करती है।

# 7

# उत्खनन प्रौद्योगिकी–कुछ प्रचलित पद्धतियाँ

औसत 5000 मीटर पानी के नीचे **खनन-क्षेत्र** अंकित कर लेने के बाद प्रश्न उठता है कि बहुधात्विक पिंडों का खनन कैसे किया जाये? अथाह गहराइयों तले पानी का दबाव भी भीषण होता है। ऐसे में बहुधात्विक पिंडों का खनन एक ओर संदेह पैदा करता है, वहीं दूसरी ओर समुद्र तल पर बिखरे ये असीम खनिज भण्डार वर्षो तक उपयोग के लिये मानव को आकर्षित करते है। लाल सागर (Red Sea) की गहराइयों से हाइड्रोथर्मल खनिजों का खनन शुरू हो चुका है। इन खनिजों को खनित कर सकने की प्रणाली का विकास गहरे समुद्र में खनन प्रक्रिया की सफलता का द्योतक है। भारत में **खनन प्रौद्योगिकी** (Mining Technology) विकसित करने की प्रणाली पर अभी विचार ही किया जा रहा है जबकि अन्य देशों में बहुधात्विक पिंडों के खनन संबंधी अनेकों पद्धतियों के पेटेन्ट पंजीकृत किये जा चुके हैं। यर्थाथवादी दृष्टिकोण से जिन पद्धतियों का प्रचलन अधिक है वे 3 मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित हैं :–

1. *हाइड्रोलिक या एअर लिफ्ट पद्धति (Hydraulic or Air Lift System) :* पिंडों को ड्रेज की तरह के संग्रहकर्त्ता यंत्र द्वारा एकत्र करके मोटे पाइपों द्वारा वैक्यूम क्लीनर की तरह खींचकर उन्हें जलयान पर लाना।
2. *कन्टीनुअस लाइन बकेट पद्धति (Continuous Line Bucket System) :*

एक के बाद एक जुडी कई ड्रेज बाल्टियों (रहट की तरह) द्वारा खोदकर जहाज़ पर लाना।

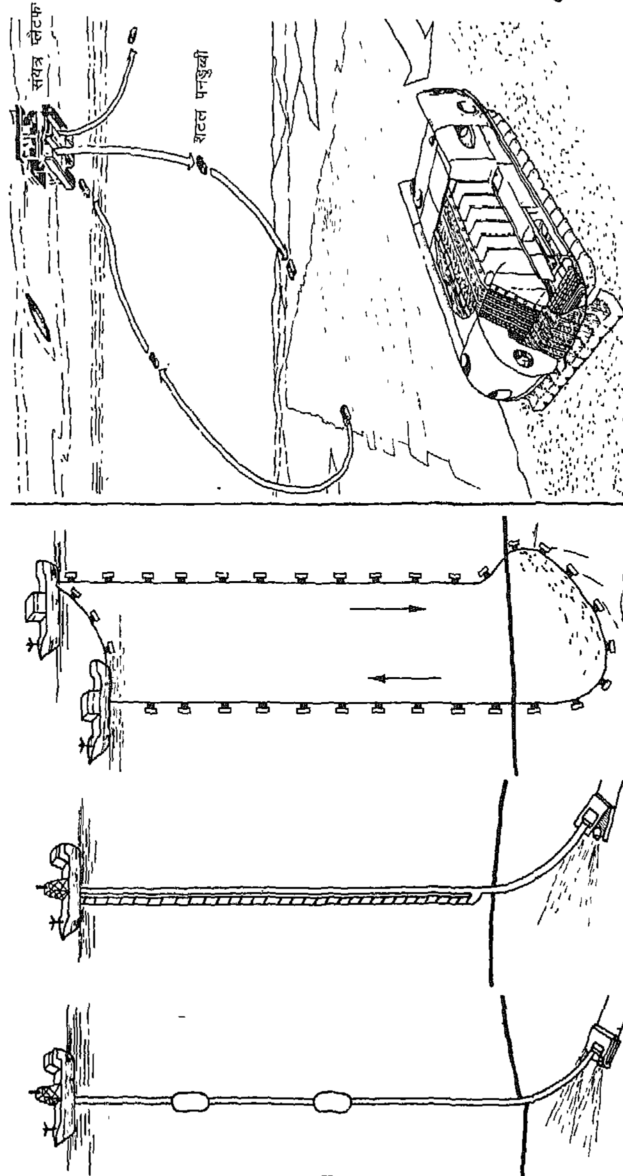
3. *शटल पद्धति (Shuttle System) :* पनडुब्बी की तरह के ड्रेज द्वारा उसमें उत्पन्न की गई प्लवनशीलता द्वारा ऊपर आने देना।

## 1. *हाइड्रोलिक या एअर लिफ्ट पद्धति :*

स्पष्ट है इस विधि में हाइड्रोलिक पम्प (पानी) या एअर लिफ्ट (संपीडित हवा) के प्रयोग से पिंड समुद्र तल से जलयान पर खींचे जाते हैं। इस खनन पद्धति में जहाज़ पर एक मोटा पाइप जिसके दूसरे सिरे पर संग्रहकर्त्ता यंत्र लगा होता है, समुद्र तल पर भेजा जाता है। यह संग्रहकर्त्ता यंत्र पिंडो को एकत्र करके पाइप तक पहुँचाता है। यहाँ से ये जहाज पर वैक्यूम क्लीनर की तरह पानी (हाइड्रोलिक) या हवा (एअर) का प्रयोगकर जलयान पर खींच लिए जाते हैं (चित्र 40 क ख, 41 ख ग)। पूरी पद्धति के 3 मुख्य अंग (Component) होते हैं :

### (अ) संग्रहकर्त्ता यंत्र :

यह पूरी पद्धति का सबसे महत्त्वपूर्ण एवं जटिल अंग होता है। आरम्भ में यह एक बिल्कुल साधारण ड्रेज की तरह का बनाया गया था। तब से अब तक इस ड्रेज की डिजाइन में अनेकों परिवर्तन किये जा चुके हैं व लगभग 60 से ऊपर डिज़ाइनों के पेटेन्ट रजिस्टर किये जा चुके हैं। इन पेटन्टों का परीक्षण भी किया जा चुका है। इस यंत्र का मुख्य काम है तल पर पड़े पिंडों को मिट्टी आदि अपशिष्ट पदार्थ से अलग कर उत्थापन यंत्र तक भेजना। पिंडों का आकार समुद्र तल के हर क्षेत्र में अलग होता है अतः संग्रहकर्त्ता यंत्र का डिजाइन पिंडों के औसत आकार एवं ढलाव कोणों (Slope Angles) को ध्यान में रखकर किया जाता है। इससे मिट्टी आदि व्यर्थ पदार्थ संग्रहित नहीं हो पाते हैं।



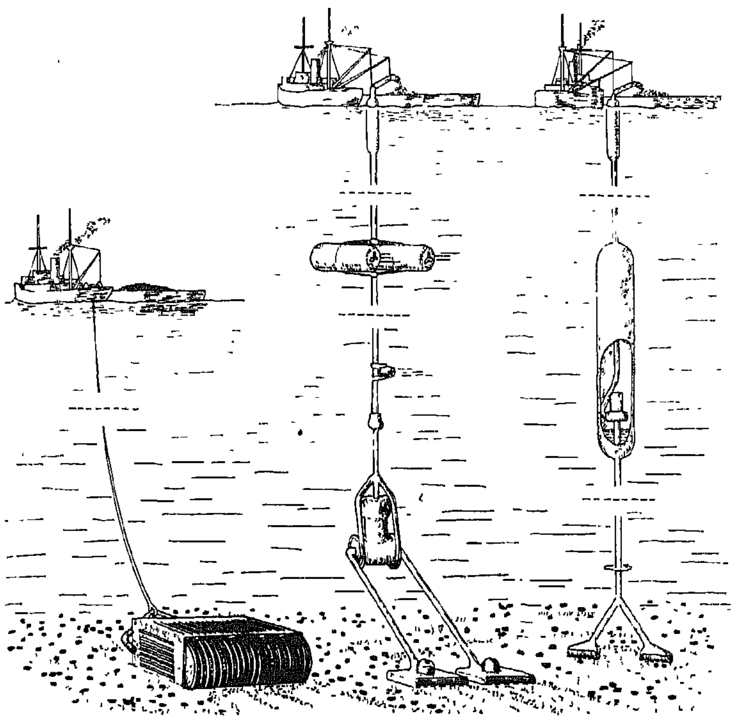

(क) हाइड्रोलिक खनन पद्धति जल उत्थापन यत्र के साथ

(ख) हाइड्रोलिक खनन पद्धति वायु उत्थापन यत्र के साथ

(ग) कन्टीनुअस लाइन बकेट खनन पद्धति

(घ) शटल उत्खनन पद्धति

**चित्र 40 :** समुद्री उत्खनन पद्धतियों के विकल्प



(क)
ड्रैग ड्रेज . उथले समुद्री क्षेत्रो में प्रयुक्त पद्धति का रूपान्तरण जलयान की गति के साथ तल को खुरच कर पिंडो का संग्रह

(ख)
हाइड्रोलिक ड्रेज . मोटर और पम्प की सहायता से पिंडो का एकत्रीकरण

(ग)
हाइड्रोलिक ड्रेज . अपनी उर्ध्व रेखा के चारो ओर घूमकर वैक्यूम क्लीनर की तरह खींचकर पिंडों का एकत्रीकरण

**चित्र 41 :** उत्खनन प्रौद्योगिकी का विकास

पिंडों का संग्रह दो विधियों द्वारा संभव है। पहली विधि में हाइड्रोलिक संग्रहकेर्त्ता यंत्र से समुद्र तल पर चलते हुए ऊपरी सतह के सभी पदार्थ खींचकर एक धातु की मोटी प्लेट द्वारा थोडा ऊपर उठा दिये जाते हैं। यहाँ पर पानी की मोटी धाराएँ मिट्टी व अन्य बारीक पदार्थों को बहा देती हैं, केवल पिंड शेष बचे रह जाते हैं। इन बचे पिडों को उत्थापन यंत्र तक पहुँचा दिया जाता है। दूसरी विधि में दो यांत्रिक जबडों (Mechanical Jaws) के बीच पिंडों को पीसने के बाद उत्थापन यंत्र तक पहुँचाया जाता है।

इस संग्रहकर्त्ता यंत्र का समुद्र तल पर चलना तथा अपनी परिधि के चारों ओर घूमकर पिड एकत्र करना जलयान से **दूर नियंत्रण** (Remote Control) विधि द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। समुद्र तल पर इसकी स्थिति जहाज़ पर लगे यंत्रों द्वारा निर्धारित की जा सकती है।

## (ब) **उत्थापन पद्धति** (Lift System)

उत्थापन पद्धति में 2 मुख्य विधियाँ विकसित की गई हैं। इन दोनों ही विधियों में पिंडों को हवा या पानी के दबाव द्वारा ऊपर खींचने का प्रावधान है। पिंडों को ऊपर भेजने के साथ-साथ इस उपकरण के कार्यों में विद्युत तारों को संग्रहकर्त्ता यंत्र तक ले जाना भी शामिल है। संग्रहकर्त्ता यंत्र द्वारा उत्पन्न कंपनों, झटकों, पानी के दबाव व जहाज़ की गति आदि से उत्पन्न अवरोधों को भी इसे वहन करना पडता है। यही नहीं, इसे स्वयं के तथा अन्य उपकरणों के भार को भी वहन करना पडता है।

समुद्री जल शक्ति द्वारा चलाये जाने वाली उत्थापन पद्धति का आर्थिक दृष्टिकोण से अधिक उद्योगों ने समर्थन किया है। दूसरी पद्धति में जहाज़ पर लगे **कम्प्रेसर** द्वारा पाइप में हवा पहुँचाई जाती है। इन दोनों पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि वायु पम्प करने (Air Lift) में कम जटिल मशीनों का प्रयोग होता है जबकि जल पम्प द्वारा उत्थापन में पिंडों का यातायात घनत्व (Transportation Density) लगभग 50 प्रतिशत अधिक उत्पन्न किया जा सकता है।

उत्थापन पाइप और संग्रहकर्त्ता यंत्र के जुडने का स्थान बहुत नाजुक होता है। इसे तलीय संरचना एवं पानी के दबाव से उत्पन्न अवरोधों से अप्रभावित रखकर डिज़ाइन किया जाता है।

**(स) खनन जलयान** (Mining Ship)

यह इस पद्धति का अंतिम महत्त्वपूर्ण अंग है जिसका कार्य एकत्रित पिंडों का परिवहन पोत (Transport Ship) तक स्थानान्तरण करना होगा। इसके साथ ही इस जलयान के कार्यों में संग्रहकर्त्ता व उत्थापन पद्धतियों को पानी में उतारना व उनका संचालन करना शामिल है।

समुद्र में स्थिर खड़ा जहाज भी सामान्यतः तीन प्रकार के दोलन अनुभव करता है— (1) जहाज का आगे-पीछे होना; (2) दायें-बायें डोलना ; (3) ऊपर नीचे झूलना। खनन जलयान में इन प्रभावो को कम करने के लिए यांत्रिकीय व्यवस्था की जाती है। इसके साथ ही जहाज का आकार आधुनिक ड्रिलिग जलयानों से बड़ा होने का प्रावधान है जिसकी वजह से उसमें मौसम की प्रतिकूलता को सहन करने की क्षमता उत्पन्न होती है। जलयान के बीचों-बीच एक विशाल चौकोर छेद—**मूनपूल** द्वारा यंत्र पानी में उतारे जाते है। सर्वेक्षण की भांति ही कृत्रिम उपग्रहों एवं कम्प्यूटर की मदद से इस जहाज़ की स्थिति एवं गति का निर्धारण किया जा सकता है।

***2. कन्टीनुअस लाइन बकेट माइनिंग सिस्टम :***

गांवों में कुंओं से रहट द्वारा पानी निकालते हुए लगभग सभी ने देखा होगा। उपरोक्त माइनिंग प्रणाली इसी सिद्धांत पर आधारित है। इस प्रणाली में समानान्तर दूरी पर लगाई गई ड्रेज बाल्टियाँ क्रम में तल से बहुधात्विक पिंड एकत्र करती हैं और उन्हें खनन जहाज़ पर खाली करके पुनः वापस चली जाती हैं।

समुद्र में बहुत अधिक गहराई होने के कारण बहुत लम्बे तार के आपस

में उलझ जाने की बहुत अधिक संभावना होती है। इसी कारण दो जहाज़ों का प्रयोग भी सुझाया गया है (चित्र 40 ग)। इसमें एक जहाज़ से खाली ड्रेज बाल्टियाँ समुद्र में लटकाकर दूसरे साथी जहाज़ पर पिंडों से भरी ड्रेज बाल्टियों को खाली करने का प्रस्ताव है। तार की लम्बाई तथा ड्रेज बाल्टियों की संख्या तलीय संरचना, मौसम व जहाज़ की गति को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। जिस तार पर ड्रेज बाल्टियाँ फिट की जाती हैं वह उलझे ना, इसलिए पॉलीप्रोपाइलीन का प्रयोग सुझाया गया है। पॉलीप्रोपाइलीन द्वारा बुना तार, लोहे या अन्य किसी प्रकार की अपेक्षा आपस में कम उलझता है। इन सभी प्रकार के तारों को अधिक मजबूती देने के लिए विशेष विधियों द्वारा तैयार किया जाता है।

ड्रेज बाल्टियों के सिरों पर दांत बनाने से इनके मिट्टी में धंस जाने की संभावना होती है। चूंकि बहुधात्विक पिंड तल की ऊपरी सतह पर ही बिखरे रहते हैं, इसलिए इन बाल्टियों के सिरों पर हल्की सी धार बना देने से काम चल सकता है। इस विधि से यह समुद्र तल की केवल ऊपरी सतह को खुरच कर पिंड संग्रह करती जाती हैं। थोड़ा ऊपर आने के बाद ड्रेज के अंदर लगी जाली से मिट्टी आदि बह जाती है और पिंड फंसे रहकर ऊपर आ जाते हैं।

### 3. ***शटल पद्धति*** *(Shuttle System)*

इस प्रणाली में पनडुब्बी की तरह के संग्रहकर्त्ता उपकरण का प्रयोग सुझाया गया है। पानी में इनका भार शून्य रखने के लिये इनमें निर्वात (Vaccum) उत्पन्न करके इनमें स्थिरक भार (Ballast Weight) रखकर समुद्र में भेजा जाता है। उपकरण में लगे थ्रस्टर्स, पानी के दबाव से बचाव करते हुए इसे नीचे की ओर ले जाते हैं। तल पर पहुँचने के बाद उपकरण पिंड एकत्र करना शुरू कर देता है। जिस दर से पिंड एकत्र होते हैं उसी दर से स्थिरक भार स्वतः (Automatic) तल पर गिरते जाते हैं। एक समय ऐसा आ जाता है जब संग्रहित पिंड और गिरे स्थिरक भार बराबर हो जाते हैं और

उपकरण का भार पुनः शून्य हो जाता है। ऐसे में उपकरण में लगे थ्रस्टर्स की सहायता से ये **संग्रहकर्त्ता** पुनः ऊपर उठना शुरू कर देते हैं। खनन जलयान के पास पहुँचने पर इनमें संग्रहित पिंड निकाल लिये जाते हैं और इनमें पुनः स्थिरक भार लगाकर इसे पुनः तल की ओर भेज दिया जाता है। इस प्रणाली में जलयान पर कम विद्युत शक्ति की जरूरत होती है। संग्रहकर्ता (Shuttle Unit) में ही विद्युत बैटरी व अन्य सभी संचालन की व्यवस्था होती है जिसे जलयान से रिमोट विधि द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। ख़नन जलयान पर इन संग्रहकर्त्ता उपकरणों को लाने ले जाने हेतु **मूनपूल** तथा संग्रह के लिए अतिरिक्त व्यवस्थाओं का प्रावधान रहता है।

फ्रांस की **एफरनॉड** कम्पनी ने इस प्रणाली का उपयोग करते हुए एक नई विधि विकसित की है। इसमें एक ही जगह कई शटल या पनडुब्बियों का प्रयोग किया जा सकता है (चित्र 40 घ)। इसके अनुसार एक शटल एक बार में लगभग 250 टन पिंडों को एकत्र कर, एक दिन में 3 चक्कर तक लगा सकती है। 24 × 12 × 7.5 मीटर की इस शटल का नियंत्रण जहाज से रिमोट विधि द्वारा किया जायेगा। एफरनॉड की योजनानुसार ये पनडुब्बियाँ पानी में लगभग 40 मीटर की गहराई पर स्थित 4 विशाल प्लेटफार्मों (Platforms) से संचालित की जायेंगीं। इन प्लेटफार्मों में कम से कम 60,000 टन पिंड या स्थिरक भार वहन करने की क्षमता होगी।

### *4. ड्रैग ड्रेज (Drag Dredge)*

खनन संयंत्रों की श्रृंखला में एक अति साधारण विधि या ड्रेजिंग (Dredging) का भी प्रस्ताव है। मिट्टी निकालने वाले ड्रैग ड्रेज का गहरे समुद्र में प्रयोग के लिये रूपान्तरण प्रस्तावित किया गया है (चित्र 41 क)। इसके अनुसार 6 × 3.5 × 1 मीटर आकार के ड्रेज में टी.वी. कैमरा व पिंगर लगाकर पिंडों की खुदाई संभव है। जलयान पर लगे टेलीविज़न और पिंगर रेकार्ड को देखकर ड्रेज के भरने का सही अनुमान लगाया जा सकता है।

इस विधि मे मुख्यतः तीन जलयानों का प्रयोग प्रस्तावित है। (1) ड्रेजिंग शिप, जिसमें अच्छी उत्तोलक घिर्रियाँ (Winches), विद्युत शक्ति पैदा करने वाले विशाल जेनरेटर एवं कर्मचारियों के रहने की व्यवस्था हो। जहाज़ के धीमी गति से चलने पर तल पर पड़ा ड्रेग (Drag) घिसटता हुआ समुद्र तल पर फैले पिंडों को एकत्र करता रहेगा। (2) दूसरा जलयान इस ड्रेजिंग जहाज़ के साथ चलेगा। इसमें पिंडों को अपशिष्ट पदार्थ से अलग करने के बाद लगभग 5000 टन पिंड संग्रह कर सकने की क्षमता होगी। (3) तीसरे जहाज़ का कार्य इन पिंडों को धातुकर्म संयंत्रों तक पहुँचाना होगा।

उपरोक्त सभी प्रणालियों में एक खनन जलयान को साल में 300 दिन लगातार चौबीसों घंटे कार्य करने का प्रक्रम है। 35 दिन का समय मौसम की गड़बडी और 30 दिन पिंडों का दूसरे जहाज़ों तक स्थानान्तरण जैसे कार्यों के लिए निर्धारित किया गया है।

समुद्री खनन से वातावरण को कम से कम प्रभावित करने के लिये उपरोक्त सभी प्रणालियों की यंत्र व्यवस्थाओं में सुधार किया जा रहा है। खनन हेतु जिस किसी भी विधि का प्रयोग किया जायेगा उसी में बहुत अधिक सक्षम कार्य-प्रणाली की जरूरत होगी। भूमि की अपेक्षा समुद्र-खनन में कई कारक अधिक जटिल हैं जैसे—दुर्घटनाएँ, उपकरणों को पानी की गहराइयों में डालना-निकालना, टूट-फूट व मौसम की प्रतिकूलता आदि। पिंडों को तल से एकत्र कर परिवहन जलयानों द्वारा धातुकर्म संयंत्रों तक पहुँचाने हेतु भी बहुत ही सक्रिय संचार-व्यवस्था जरूरी होगी।

लाल सागर में किए गए परीक्षणों के आधार पर यह परिणाम निकाला गया है कि ड्रैग ड्रेज या शटल प्रणालियों की तुलना में हाइड्रोलिक या एअर लिफ्ट प्रणाली अधिक सस्ती एवं सुविधाजनक सिद्ध हो सकती है।

# 8

# धातुकर्म: आग और पानी के प्रयोग से

बहुधात्विक पिंडों से धातुकर्म (Metallurgy) द्वारा धातुएँ अलग करने का काम भारत में अभी भी प्रयोगशालाओं तक ही सीमित है। भारत में मैंगनीज़ के पर्याप्त भंडार होने के कारण यहाँ संभवतः पिंडों से सिर्फ निकिल, कोबाल्ट और तांबा अलग करने की बात सोची जा रही है। इन पिंडों से धातुकर्म द्वारा तीन या चार धातुओं (मैंगनीज को मिलाकर) के निष्कर्षण यंत्र लगाए जाएँ, इसका अंतिम फैसला धातुकर्मियों, अर्थशास्त्रियों एवं सरकार पर निर्भर करेगा। फ्रांस व कुछ अन्य देश इनमें से शुद्ध मैंगनीज़ भी निकालने की बात सोच रहे हैं ताकि कुल धातुकर्म मूल्य को कम किया जा सके।

बहुधात्विक पिंडों से धातुएँ अलग करने के लिए एक नई धातु कर्म प्रणाली की आवश्यकता होगी। इसका कारण है इसके छिद्रों में व्याप्त समुद्र का पानी और एल्युमिनियम, सिलिकेट, कैल्शियम एवं कार्बोनेट जैसे कई तत्वों का मिश्रण। मुख्य धातुएँ भी इन पिंडों में ऑक्सीहाइड्रॉक्साइड के रूप में मिलती हैं। अभी तक विकसित विधियों में ये 2 विधियाँ अधिक मान्य हैं :–

1. **ताप धातुकर्म** (Smelting or Pyrometallurgy)
2. **जल धातुकर्म** (Leaching or Hydrometallurgy)

मोटे तौर पर पहली विधि में अग्नि द्वारा कच्ची अयस्क (Ore) को गलाकर मुख्य धातुएँ प्राप्त की जाती हैं। दूसरी विधि में पानी के प्रयोग से

इन धातुओं को अलग किया जाता है। कुछ धातुकर्मी इन दोनों ही क्रियाओं के पारस्परिक संयोग द्वारा भी धातु निकालने की बात कहते हैं। दोनो ही विधियों में धात्विक पिंडों का चूरा बनाने की आवश्यकता होती है ताकि रासायनिक क्रियाओं का संयोग अच्छी तरह हो सके।

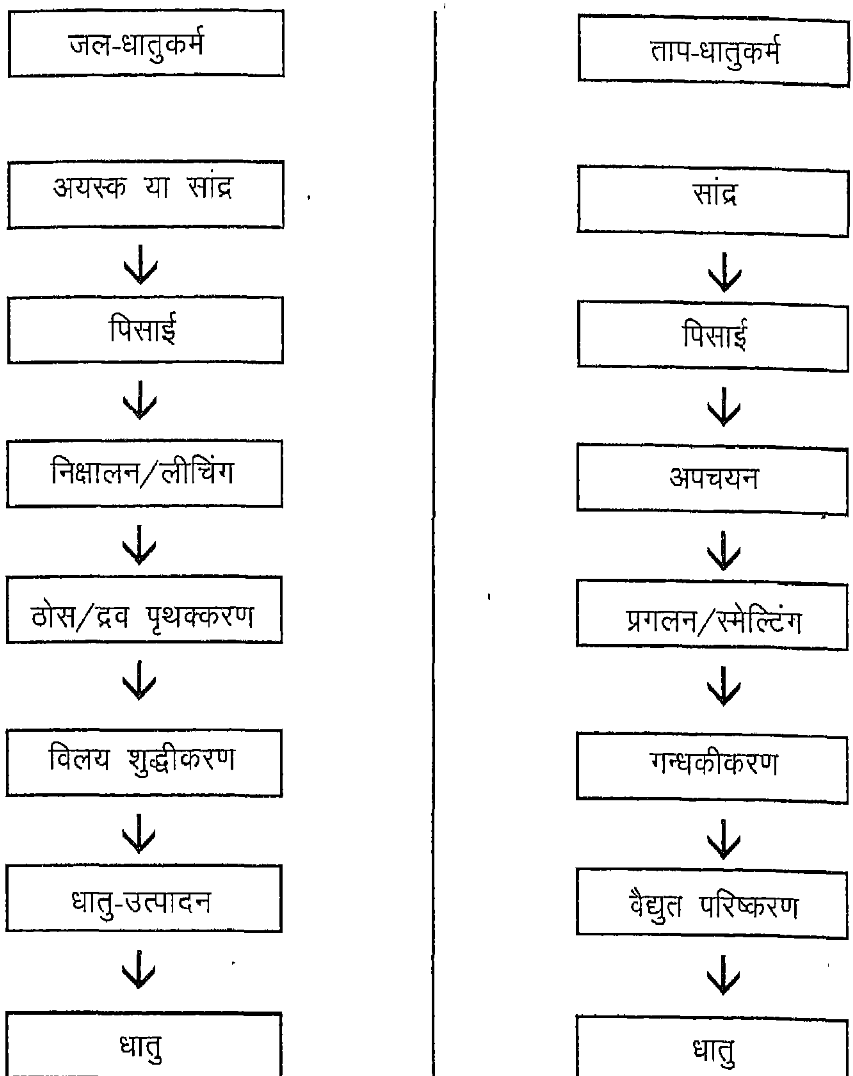
*1. ताप धातुकर्म (Pyrometallurgy)*

इस विधि में पिंडों के पाउडर से पहले धातुओं का अपमिश्रण (Slurry) विद्युत-भट्ठियो (Furnace) के प्रयोग द्वारा तैयार कराया जाता है। इसका ऑक्सीकरण, गन्धकीकरण और पुनः ऑक्सीकरण करके कच्ची धातुएँ अलग की जाती हैं। अब इस मिश्रण में साधारणतयाः गंधक एवं लौह तत्व की अधिकता हो जाती है। इसकी सल्फर-डाई-ऑक्साइड से प्रतिक्रिया (Reaction) कराकर इसमें से निकिल, तांबा और कोबाल्ट अलग कर लिए जाते हैं।

*2. जल धातुकर्म (Hydrometallurgy)*

इस विधि में मूलरूप से अम्लों (सल्फ्यूरिक एवं हाइड्रोक्लोरिक), क्षारों (अमोरिया) तथा गैसों (कार्बन-मोनो-ऑक्साइड, कार्बन-डाई-आक्साइड व सल्फर-डाई-ऑक्साइड) का प्रयोग किया जाता है। बहुधात्विक पिंडों से धातुएँ अलग करने के लिए यह विधि अधिक प्रचलित है। इन मूल क्रियाओं में रूपान्तरण करके अलग-अलग कई तरह की विधियाँ विकसित एवं प्रयोग की जा रही हैं। सामान्यतः जल धातुकर्म प्रणाली में अमोनिया का अधिक प्रयोग होता है। क्योंकि उपयोग के बाद अमोनिया को पुनः प्रारम्भिक अवस्था में प्राप्त किया जा सकता है। अमोनिया विधि में एक बड़ा दोष यह है कि इसमें मैंगनीज और लोहा बेकार हो जाता है।

## *अभिक्रियाओं की विभिन्न अवस्थाएँ*



भारत में क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, भुवनेश्वर में अमोनिया लीच व सल्फ्यूरिक अम्ल लीच व सल्फेट रोस्टिंग (अधिक ताप) पर परीक्षण किये गए। 29 अगस्त 1983 को स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को अमोनिया विधि द्वारा निकाली धातुओं से बने सिक्के भेंट किये गये थे। प्रयोगशाला स्तर पर अमोनिया विधि द्वारा धातुएँ निकालने में 80% सफलता प्राप्त हो चुकी है। इस विधि द्वारा लगभग 200 किलोग्राम पिंडों से प्रतिदिन धातुएँ निकालने का संयंत्र प्रयोगशाला में लगाया गया है। दूसरी विधि में तनु सल्फ्यूरिक अम्ल का प्रयोग कर 90% निकिल, कोबाल्ट व तांबा प्राप्त किया गया है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर में भी **क्यूप्रियान-अमोनिया विधि** द्वारा छोटे पैमाने (20 से 300 ग्राम) पर बहुधात्विक पिंडों से धातुएँ निकालने का प्रयत्न किया गया। इस विधि द्वारा 95% निकिल, 95% तांबा व 78% कोबॉल्ट निकालने में सफलता मिली। एक अन्य **अमोनिया लीच विधि** द्वारा 99.50% तांबा व निकिल एवं 78.5% कोबाल्ट प्राप्त करने की रिपोर्ट है।

ताप एवं जल धातुकर्म दोनो ही विधियों द्वारा लगभग 90% निकिल अलग की जा सकती है परन्तु ताप धातुकर्म द्वारा तांबा लगभग 80% ही प्राप्त हो पाता है। दूसरी ओर ताप धातुकर्म में जल धातुकर्म की तुलना में अधिक कोबाल्ट प्राप्त होता है।

बहुधात्विक पिंडों के छिद्रों में लगभग 30% आर्द्रता होने के कारण विद्युत भट्टियों द्वारा यह पानी सुखाने के लिये अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ताप धातुकर्म विधि द्वारा इस कारण धातु प्राप्ति की कीमत लगभग 60% अधिक हो जाती है। इसलिए ही इन पिंडों के धातुकर्म में जल धातुकर्म विधियॉ अधिक प्रस्तावित हैं।

धातु निष्कर्षण के बाद बचा हुआ अपशिष्ट पदार्थ कहाँ फेंका जाए, यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। अपशिष्ट पदार्थ को समुद्र तल पर अथवा तटीय क्षेत्रों में फेंकने के संभावित परिणामों का अध्ययन अमरीकी खान ब्यूरो ने किया है। **एन्वायरनमेंट प्रोटेक्शन एजेंन्सी** द्वारा 8 मुख्य विषाक्त धातुएँ व 17 अन्य तत्त्व

निर्धारित किये गए हैं। ये धातुएँ हैं— आर्सेनिक, बेरियम, कैल्शियम, क्रोमियम, मर्करी, सीसा, सिल्वर व सेलेनियम। अपशिष्ट पदार्थ में इन सभी धातुओ एवं तत्वों का प्रभाव शून्य पाया गया है।

बहुधात्विक पिंडों में निकिल, कोबाल्ट व कॉपर की प्रतिशत मात्रा बहुत कम होने के कारण कच्ची धातु से समुद्र में ही धातु कर्म कराने की बात सोची जा रही है। कई धातु कर्मियों का विचार है कि ऐसा करने से परिवहन खर्च में भारी कटौती की जा सकती है। जापानी वैज्ञानिक, महासागरों में कहीं पर तैरता हुआ संयंत्र लगाने की संभावना पर विचार कर रहे हैं। इस संभावना का दूसरा पहलू है, सागर मे अधिक प्रदूषण फैलने का। तटीय क्षेत्रों में संयंत्र लगाने से परिवहन खर्च तो बढ सकता है परन्तु इस समय अपशिष्ट घोषित पदार्थ से भविष्य में कभी मैंगनीज और अन्य धातुएँ निकाली जा सकती हैं।

# 9

# समुद्री पर्यावरण: खनन से कितना प्रभावित

जैसा कि हमने धातु-कर्म के संबंध मे पढ़ा कि **अमरीकी खान ब्यूरो** ने अपशिष्ट पदार्थ पर परीक्षण करके बताया कि इससे वातावरण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा। परन्तु खनन करके पिंड निकालते समय समुद्री वातावरण में परिवर्तन तो अवश्यसंभावी हैं। इन परिवर्तनों का वातावरण पर प्रभाव एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। बहुधात्विक पिंडों का खनन प्रारम्भ होने से पहले एवं बाद तक, सम्पूर्ण योजना का यह सबसे महत्त्वपूर्ण एवं दुष्कर पहलू है।

महासागरों में हुए परिवर्तनों का वातावरण पर एवं वातावरण में हुए परिवर्तनों का महासागरों पर व्यापक प्रभाव पडता है। उदाहरण के लिए, जब भी समुद्री जैविक उत्पादकता (Biological Productivity) ज़्यादा हुई उसने वातावरण से ज्यादा कार्बन-डाई-आक्साइड सोखी है। परिणामस्वरूप संसार भर में मौसम ज़्यादा ठंडा हो गया है। हाल में हुई खोजों से यह ज्ञात हुआ है कि वातावरण में बढ़ी गैसों को (ग्रीन हाउस प्रभाव) समुद्र 50 से 100 वर्षों तक सोखे रह सकता है। सूक्ष्म पादपों (Phytoplankton) का समुद्री तापमान पर नियंत्रण भी हाल में हुई खोजों से ज्ञात हुआ है। समुद्री खनन के परिणामस्वरूप निकले अपशिष्ट पदार्थों से यह जैविक उत्पादकता किसी स्तर तक प्रभावित हो सकती है।

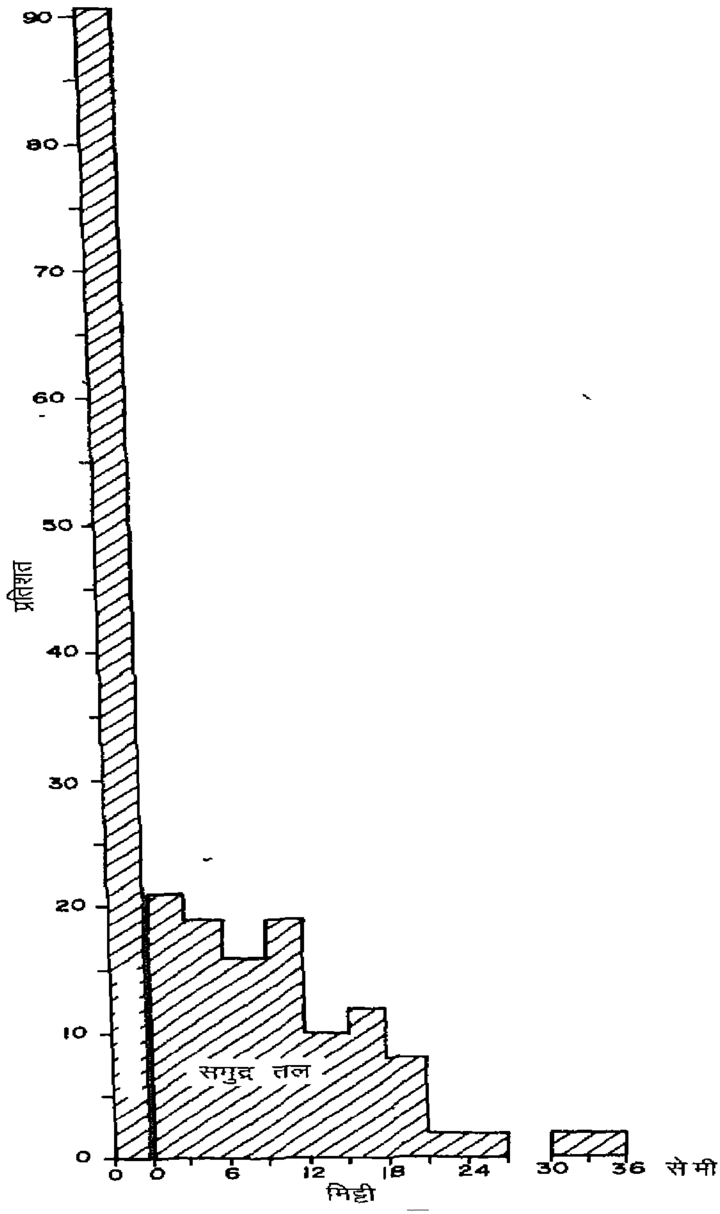
बहुत से वैज्ञानिक एवं खनन कम्पनियाँ विश्व के महासागरों में खनन से

हुए परिवर्तनों का अलग-अलग ढंग से अध्ययन कर रहे हैं। जर्मन वैज्ञानिकों द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार खनन क्षेत्र सम्पूर्ण पृथ्वी का एक बहुत बड़ा हिस्सा है। इसमें हुए भारी परिवर्तन वहाँ के जीवन और सम्पूर्ण वातावरण को किस तरह प्रभावित करेंगे यह पूरी तरह जाने बिना समुद्री वातावरण में किए गए परिवर्तन भयावह भी सिद्ध हो सकते हैं। अतः इस नवीन उद्योग को प्रारम्भ करने से पहले इस समस्या का विस्तृत अध्ययन बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है।

भारत में **राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान** का कोचीन स्थित क्षेत्रीय केन्द्र **खनन क्षेत्र** में पर्यावरण अध्ययन हेतु प्रारम्भिक आंकड़े एकत्र कर रहा है। इन आंकड़ों के परिणाम प्रकाशित होने में संभवतः अभी बहुत समय लगेगा। इस संस्थान से प्रकाशित एक शोध-पत्र (Paper) के अनुसार 'मध्य हिंद महासागर की स्थिति ऐसी है कि वहाँ हुए परिवर्तनों का वातावरण पर कोई व्यापक प्रभाव नहीं होगा।' फिर भी इस क्षेत्र में अन्तर्जलीय धाराओं व पानी के मिश्रण (Mixing of Waters) की अभिक्रिया द्वारा पदार्थ का विसर्जन (Dispersion) आदि के विस्तृत अध्ययन की अभी आवश्यकता है।

खनन के फलस्वरूप वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के विषय में अगर पहले से ही जानकारी हो तो किसी भी प्रतिकूल प्रभाव को कम किया जा सकता है। इस दिशा में किये गए अध्ययन दर्शाते हैं कि खनन का प्रभाव मुख्य रूप से निम्न क्षेत्रों में देखा जा सकता है:—

1. संग्रहकर्त्ता यंत्र के सीधे सम्पर्क में आने वाली कुछ सेंटीमीटर मोटी मिट्टी की तह पर;
2. खनन क्षेत्र से थोड़ी दूरी पर, जहॉ इस क्षेत्र से होकर निकलने वाली धाराएँ अपने साथ मिट्टी बहाकर पुनः विसर्जित कर दें; तथा
3. समुद्र सतह या बीच की सतहों पर जहाँ अपशिष्ट पदार्थ की निकासी हो।




**चित्र 42 :** तलीय मिट्टी मे बहुधात्विक पिड

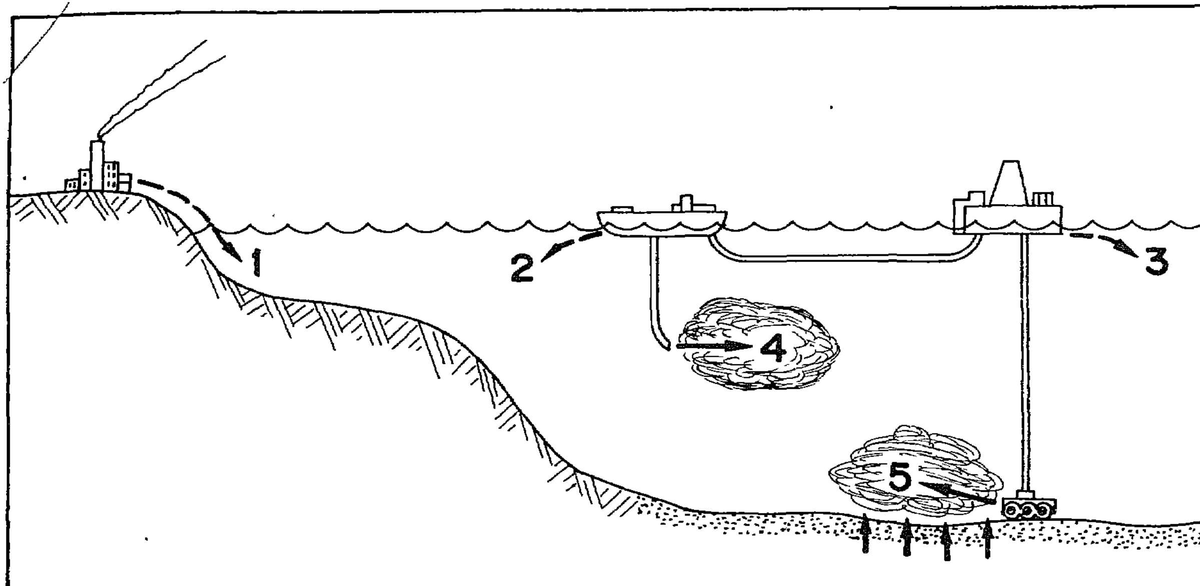
*1. संग्रहकर्त्ता यंत्र के समीप प्रभाव*

गहरे समुद्र से धात्विक पिंडों के खनन का वातावरण पर प्रभाव अन्य बातों के अलावा संयंत्र के प्रकार पर भी निर्भर करेगा। बहुधात्विक पिंड सतह पर बिखरे (चित्र 42) होने के कारण तल का बहुत बड़ा क्षेत्र संग्रहकर्त्ता यंत्र के सीधे संपर्क में आने की संभावना है। तलीय परिवर्तन बहुत कुछ इस संग्रहकर्त्ता यंत्र की गति एवं चाल पर निर्भर कर सकते हैं। इन परिवर्तनों में सबसे महत्त्वपूर्ण होगा तलछट की मिट्टी (Bottom Sediments) का समुद्र तल पर गुबार (चित्र 43)। इस गुबार पर किया गया एक अध्ययन बताता है कि संग्रहकर्त्ता यंत्र के अवरोध द्वारा उत्पन्न हुआ मिट्टी एवं कीचड़ का यह गुबार इस यंत्र के आस-पास ही एक किलोमीटर के घेरे में घूमता रहेगा।

जर्मन वैज्ञानिकों की रिपोर्ट के अनुसार संग्रहकर्त्ता यंत्र के सीधे संपर्क में आने के कारण उस स्थान पर रहने वाले जीव-जन्तु तथा मिट्टी के रासायनिक व कार्बनिक पदार्थ खाकर जीवनयापन करने वाली कुछ अन्य जातियों के पूरी तरह नष्ट हो जाने की संभावना है। दूसरी स्थिति यह हो सकती है कि मिट्टी की इस तह (जो इन जीव-जन्तुओं का भोजन है) के नष्ट हो जाने पर वहाँ रहने वाली प्रजातियाँ दूसरे स्थान को जा सकती हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार इन जीव-जन्तुओं की मृत्यु द्वारा हुई कमी, धातु प्राप्ति के आगे नजरअंदाज की जा सकती है। अमरीका के कुछ वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण है कि खनन समाप्त होने पर इस क्षेत्र में कुछ नये तरह के जीव-जन्तु पैदा हो सकते हैं जो पिंडों की अनुपस्थिति के कारण पूर्व जीवन से पूर्णतया भिन्न होंगे।

*2. खनन क्षेत्र से थोड़ी दूरी पर प्रभाव*

महासागरों में अंदर ही अंदर चलने वाली कई धाराएँ होती हैं। ये अन्तर्जलीय धाराएँ खनन-क्षेत्र से होकर गुजरते समय खनन-क्षेत्र के पास उठे मिट्टी के गुबार को बहाकर ले जा सकती हैं। यह मिट्टी तल पर पुनः जमा होने (Settle) तक अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाल सकती है। सभी खनन क्षेत्र




चित्र 43 : उत्खनन द्वारा निकाले अपशिष्ट पदार्थ के गुबार का प्रभाव विभिन्न क्षेत्रो मे (जर्मन वैज्ञानिको के अनुसार) 1 तटीय सयत्रो द्वारा फेका पदार्थ 2 परिवहन जलयान द्वारा विस्थापित पदार्थ और 3. खनन प्लैटफार्म द्वारा विसर्जित पदार्थ रोकथाम सभव और आवश्यक 4. मध्यवर्ती तहो पर एव 5 संग्रहकर्ता यन्त्र के सम्पर्क का सीधा प्रभाव मुश्किल नियन्त्रण। *(चित्र : थील आदि)*

आस-पास न होकर अलग-अलग हैं, इस कारण धाराओं द्वारा प्रभावित क्षेत्र मुख्य क्षेत्र की अपेक्षा कहीं अधिक हो सकता है।

*3. अपशिष्ट पदार्थ की निकासी*

अपशिष्ट (बेकार) पदार्थ की निकासी तीन जगहों पर संभव है—सतह पर, मध्यमवर्ती गहराइयों पर या तल के बिल्कुल पास।

अपशिष्ट पदार्थ में अधिकांशतः तलीय जीव-जन्तुओं सहित वहाँ की मिट्टी एवं पिंडों के महीन टुकड़े हो सकते हैं। यह अगर सतह पर निकाला जाए तो पानी में प्रवेश करते ही कुछ भारी पदार्थ तो तुरंत डूब जायेंगे जबकि अन्य महीन पदार्थ पानी में ही उतराते-छितराते रहेंगे। कुछ अध्ययन बताते हैं कि यह गुबार लगभग 100 किलोमीटर लंबा एवं 20–30 किलोमीटर चौड़ा हो सकता है जो सतह से लगभग 50 मीटर की गहराई तक सीमित रहेगा। अन्य अध्ययन के अनुसार, फेंके गए पदार्थ का यह घना गुबार उस जगह पर पहुँचने वाले प्रकाश में अवरोध उत्पन्न कर सकता है। फलस्वरूप प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा भोजन बनाने वाले अति सूक्ष्म पादपों (चित्र 6) के प्रभावित होने की आशंका है। ये सूक्ष्म पौधे जीवन की आधार शृंखला (Food Chain) की पहली इकाई हैं। इससे इनके ऊपर निर्भर बड़ी जातियाँ (चित्र 7), मछलियाँ और अन्ततः मनुष्य जीवन भी प्रभावित हो सकता है। प्रारम्भिक परीक्षणों के अनुसार यह प्रभाव अधिक हानिकारक नहीं होगा। फिर भी इस विषय में विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इस शृंखला में किए गए कुछ अध्ययन ठीक इसके विपरीत बात कहते हैं। इन अध्ययनों के अनुसार 4000 से 6000 मीटर गहराई से लाई गई मिट्टी सतही जीवों के लिए अधिक पौष्टिक हो सकती है।

समुद्र में जीवन सबसे सघन उन सतहों पर होता है जहाँ तक सूर्य का प्रकाश पहुँच सकता है। मध्यमवर्ती सतहों पर लगभग 2000 मीटर से नीचे सामान्यतः जीवन कम होता जाता है। अपशिष्ट पदार्थ सतह पर फेंकने से यह तल पर बैठने तक 4 से 6 हजार मीटर गहरी सभी सतहों एवं जीव-

जन्तुओं को प्रभावित कर सकते हैं। अतः कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार यदि तल के पास ही किसी तरकीब से पिंड, अन्य पदार्थ से अलग कर लिये जायें तो अधिक श्रेष्ठ होगा। इस तरह से कम ही जीव इस पदार्थ से प्रभावित हो सकेंगे। संग्रहकर्त्ता यंत्र भी इस तरह से विकसित किये जा रहे हैं जो तलीय मिट्टी को कम अव्यवस्थित करके अधिक पिंड संग्रह करा सकें। इससे सम्पूर्ण खनन का मूल्य बढ़ सकता है परन्तु ऐसे उपाय न करने से होने वाले नुकसान की अपेक्षा यह मूल्य बहुत कम होगा।

खनन से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन आरम्भ से ही अमरीका, जर्मनी, जापान, फ्रांस और सोवियत संघ की कई कम्पनियों द्वारा किये गए हैं। इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया जा रहा है :—

## ब्लैक प्लैटो परीक्षण

उत्तरी अटलांटिक महासागर के ब्लैक प्लैटो क्षेत्र में अमरीकी कम्पनी **डीप सी वेन्चर्स** ने 800 मीटर गहराई पर परीक्षण किये हैं। इनमें वायु उत्थापन पद्धति (Air Lift System) द्वारा खनन से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है। इन परीक्षणों द्वारा परिणाम निकाला गया है कि इस खनन प्रक्रिया से छोंटे जीव-जन्तुओं की भोजन उत्पादकता बढेगी और कोई विपरीत प्रभाव नहीं होगा।

## डोम्स

अमरीका की ही **गहन समुद्री खनन पर्यावरण अध्ययन योजना** (डोम्स) मे भौतिक वातावरण संबंधी आंकड़े एकत्र किए गए। ये आंकड़े जल-धाराओं, तरंगों, स्थानीय जलराशि एवं उर्ध्व तहों के अध्ययन से संबंधित थे। गुबार के अध्ययन में ये आंकड़े बेहद महत्वपूर्ण हैं क्योंकि कणों का वितरण, विसर्जन और डूबना इन पर निर्भर करता है।

डोम्स योजना के दौरान खनन से संभावित पर्यावरण संबंधी प्रभाव सामने

आए। इनके अनुसार संग्रहकर्त्ता यंत्र की गति के कारण इसके आस-पास रहने वाले सभी जीव-जन्तु नष्ट हो जायेंगे। इसके द्वारा उत्पन्न मिट्टी का गुबार आस-पास रहने वाले जीव-जन्तुओं सहित वह सब जैविक पदार्थ दबा देगा जिसको खाकर ये जीव-जन्तु जिन्दा रहते हैं। इसके अतिरिक्त खनन जलयान द्वारा सतह पर फेंका गया अपशिष्ट पदार्थ पानी में निलंबित कणों की संख्या बढ़ा देगा, जिसके फलस्वरूप वहाँ रहने वाले पादपों (Phytoplankton) की प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया धीमी हो जायेगी। अतः अनुकूलता के लिए इन जीवों की जाति-संरचना में अंतर पड़ेगा।

डोम्स योजना द्वारा निष्कर्ष निकाला गया कि वृहत आर्थिक रूप से समुद्र उत्खनन का समुद्री वातावरण पर केवल सीमित प्रभाव ही रहेगा।

## निष्कर्ष

अलग-अलग राष्ट्र एवं कम्पनियाँ अलग-अलग तरीकों से अभियान दल भेजकर इस दिशा में अध्ययन कर रही हैं। कई बार एक ही प्रकार के परीक्षण अलग-अलग देशों द्वारा किए गए हैं। इस गंभीर समस्या का विस्तृत गहन अध्ययन होने के बावज़ूद भी 15 अगस्त 1990 को न्यूयार्क में हुई एक सभा में जर्मन वैज्ञानिक **थील** की राय से वहाँ उपस्थित बहुमत सहमत था कि अब भी इस दिशा में बहुत अनुसंधान की जरूरत है।

अमरीका एवं जर्मनी जैसे अमीर व विकसित तथा भारत जैसे विकासशील राष्ट्र लगभग सभी आज यह अनुभव कर रहे हैं कि समुद्र विज्ञान एक बेहद खर्चीला विषय-क्षेत्र है। समुद्र विज्ञान के इतिहास में कई बार ऐसा हो चुका है कि बहुत से राष्ट्रों ने मिलकर किसी समस्या के लिए सम्मिलित प्रयास किए हैं। **अन्तर्राष्ट्रीय भू-भौतिकी वर्ष, अन्तर्राष्ट्रीय हिंद महासागर अभियान** तथा आजकल **वातावरण, कार्बन डाई और समुद्र** पर **जेगॉफ** कार्यक्रम जिसमें संसार के सभी राष्ट्र हिस्सा ले रहे हैं, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के जीवंत उदाहरण हैं। बहुत से वैज्ञानिकों का मत है कि इस महंगे और गहरे अध्ययन

में, सम्मिलित प्रयास का परिणाम भूतकाल की तरह ही ज्यादा लाभकारी हो सकता है। किसी आधार स्टेशन पर सभी एकत्रित आंकड़े एकत्रित किए जा सकते हैं जहाँ प्रत्येक राष्ट्र या व्यक्ति को इनका प्रयोग करने की सुविधा हो। इस प्रकार एक बार फिर बहुत से मानव-मस्तिष्क मिलकर कम खर्च में पर्यावरण की गंभीर समस्या का स्थाई समाधान खोज़ सकते हैं। बहुत से वैज्ञानिकों की राय है कि संयुक्त राष्ट्र (United Nations) इस विषय पर पुनः सर्व सम्मति से विचार कर सकता है। क्योंकि संयुक्त राष्ट्र ने ही इन बहुधात्विक पिंडों एवं इनमें छिपे धातु भंडारों को मानव जाति की सामूहिक सम्पत्ति की संज्ञा दी थी और संयुक्त राष्ट्र से ही **समुद्री कानून** बनाने की शुरुआत भी हुई थी।

# 10

# अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून और भारतीय खनन-क्षेत्र

समुद्री कानून (Law of the Sea) का विषय बड़ा ही जटिल है। मानचित्र उठाकर देखने पर पता चलेगा कि मात्र 29 राष्ट्र ऐसे हैं जो अन्य राष्ट्रों की तटीय सीमाओं से घिरे हैं। बाकी के लगभग 150 राष्ट्रों की तटीय रेखाएँ समुद्र से घिरी हैं। भारत की ही लगभग 6500 किलोमीटर लम्बी तटरेखा को हिंद महासागर घेरे है। अब प्रश्न यह उठता है कि किसी भी राष्ट्र की सीमा समुद्र में कहाँ तक हो या फिर समुद्र में सीमा प्रहरी कहाँ बैठाए जाएँ? एक देश की नौकाएँ/जहाज दूसरे देश की सीमा में आ सकते हैं। कभी मछली पकड़ने, कभी जासूसी करने तो कभी तस्करी करने। जैसा कि हमने अभी पढ़ा कि समुद्र असीमित भण्डारों का ख़ज़ाना है। जिन बड़े, विकसित राष्ट्रों के पास साधन हैं वे छोटे, विकासशील राष्ट्रों की सम्पत्ति (मछली, खनिज आदि) ले जा सकते हैं और वहाँ (दूसरे राष्ट्र क़ी समुद्री सीमा में) अपने देश की गंदगी, कचरा एवं व्यर्थ रेडियोधर्मी पदार्थ जैसी चीज़ें डाल सकते हैं।

सदियों से इस संदर्भ में झगड़े और बहसें चल रही हैं। इनका एक संदर्भ है : 1608 में, ह्यूगो नामक व्यक्ति ने स्पेन, पुर्तगाल और ब्रिटेन के खिलाफ डच लोगों की शिकायतों का वर्णन किया है। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा लिखित पुस्तक **भारत एक खोज** (Descovery of India) में भारत से संबंधित समुद्री झगड़ों का संदर्भ मिलता है। तेल, मछली, अनाधिकृत

कब्जा आदि को लेकर हुए झगड़े न्यायालयों तक पहुँचने के अनेकों संदर्भ हैं।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए 1958 में लगभग 81 राष्ट्र जेनेवा में संपन्न एक सम्मेलन (Conference) में समुद्री कानून संबंधी नियम बनाने हेतु सम्मिलित हुए। इस सम्मेलन में जलमग्न भूमि से संबंधित 4 मुख्य नियम बनाये गए :–

1. सीमांतर्गत समुद्र संबंधी (On the Territorial Sea and Contiguous Zone)
2. महाद्वीपीय तटों से संबंधित (On the Continental Shelf)*
3. मुख्य महासागर संबंधी (On the High Sea) एवं
4. महासागरों में जैविक भंडारों एवं मत्स्यादि उद्योग संबंधी (On Fishing and Conservation of Living Resources of the High Sea)

नियम बनाने के बाद सब कुछ सुलझ जाए, एकदम ऐसी बात नहीं हो सकती। संयुक्त राष्ट्र के **खाद्य एवं कृषि विभाग** (Food and Agricultural Organisation) की एक प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार 106 में से 40 राष्ट्रों ने यह दावा किया कि उनके राष्ट्र की तटरेखा से 12 मील तक के क्षेत्र पर उनका न्यायिक अधिकार होगा। 29 राष्ट्रों ने 3 मील, 14 ने 6 मील और 4 ने 10 मील की मांग की और बाकी राष्ट्र सीमा से बढ़कर 200 मील की मांग करने लगे।

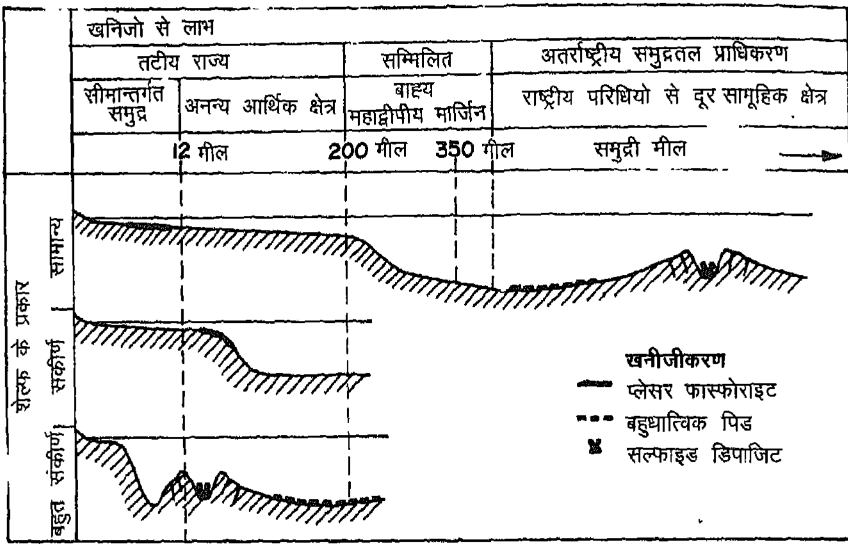
अब जैसा कि स्वाभाविक है इन विभिन्न सीमा रेखाओं के कारण अन्तर्राष्ट्रीय झगड़े बढ़ गए। न्यू इंग्लैंड के पास मछली पकड़ रहे रूसी जहाजों (Fishing Vessel) को अमरीकी तटरक्षक ने पकड़ लिया। अलास्का की खाड़ी में कोरिया के फिंशिंग वेसल को भी अमरीकी तटरक्षक ने घेर लिया। इसी तरह आइसलैंड और ब्रिटेन के बीच **मछली युद्ध** बरसों चलता

* इस संहिता मे महाद्वीपीय शेल्फ की परिभाषा भूगर्भ वैज्ञानिकों द्वारा निर्धारित परिभाषा न मानकर तटरेखा से 200 समुद्री मील की दूरी तक मानी गई है।

रहा। आइसलैंड का दावा 200 मील का था जबकि ब्रिटेन ने केवल 12 मील को अनुमोदित किया और अपने **फिशिंग शिप** आइसलैंड भेजता रहा। 1973 में आइसलैंड तटरक्षक ने ब्रिटेन के मछली के जालों को नष्ट कर उसके जहाजों को बेकार कर दिया। ब्रिटेन ने इन जहाजों की सुरक्षा के लिए दूसरे जहाज भेजे तो आइसलैंड ने संयुक्त राष्ट्र (N.A.T.O) में अपील दायर कर दी। न्यायिक फैसले के बाद ब्रिटेन ने आइसलैंड में जाना बंद कर दिया।

सारांश यह है कि समुद्री सीमाओं को लेकर 1 मार्च 1977 तक झगड़े चलते ही रहे। इस तिथि को तटरेखा से 200 मील तक राष्ट्र के आर्थिक अधिकार का अंतर्राष्ट्रीय कानून पक्का बना दिया गया (चित्र 44)। कानून बनने के कुछ दिनों बाद 130 मील पर अमरीकी तट रक्षक ने 2 रूसी फिशिंग वेसल फिर घेर लिए। इसका केस अमरीकी बोस्टन कोर्ट में चल रहा था। जीतने पर 1 साल की कैद, 1 लाख अमरीकी डालर जुर्माना और जहाज जब्त की शर्त। इस केस के बाद अब लगभग सभी राष्ट्र सतर्क हो उठे और बगैर आज्ञा दूसरे राष्ट्र की 200 मील सीमारेखा तक नही जाते।

नई दुनिया (अमेरिका) की खोज के बाद वहाँ पर मिले खजाने को लूटने के लिए भगदड़ मच गई थी। स्पेन के लोग कुछ ज़्यादा ही लालची हो उठे थे। वे इस नई दुनिया से बहुत-सा ख़जाना और जवाहरात जहाजों पर लादकर लाने लगे। अंग्रेज, स्पेनियों से भी ज्यादा लालची हो गये थे। वे इन जहाजों को बीच में ही लूटने की कोशिश करते। इस आपाधापी में बहुत-सा सामान रास्ते में ही गिर जाता। लोगों का विश्वास है कि स्पेन से आइबेरिया के बीच रास्ते में गिरा यह सामान कभी न कभी लोगों को जरूर मिलेगा।




**चित्र 44 :** संयुक्त राष्ट्र समुद्री कानून द्वारा निर्धारित . समुद्र की सीमा रेखाएँ

समुद्री कानून का क्षेत्र वृहत है जिसका वर्णन यहां संभव नहीं। अतः हम सीधे बहुधात्विक पिंडों के संदर्भ में चलते हैं। जैसा कि हम अब तक समझ चुके हैं कि बहुधात्विक पिंडों का क्षेत्र इस 200 मील की सीमा से परे गहन

नये समुद्री कानून के द्वारा देशों को प्राप्त विशेषाधिकार के अन्तर्गत 1955 में भारत को अपनी तटरेखाओं से 200 समुद्री मील (320 किलोमीटर) तक जलमग्न क्षेत्र की प्राप्ति हुई है। यह क्षेत्र **अनन्य आर्थिक क्षेत्र** (Exclusive Economic Zone) कहलाता है जो अनेकों खनिजों का भण्डार है। लक्षद्वीप, अण्डमान-निकोबार द्वीप सहित भारत की सम्पूर्ण तटरेखा लगभग 7500 किलोमीटर है। अतः यह क्षेत्र बहुत विशाल क्षेत्र है जो सम्पूर्ण भारत-भूमि के लगभग तीन चौथाई भाग के बराबर है।

समुद्र में औसत 5 हज़ार मी. गहरे पानी तले है। राष्ट्रों की सीमा रेखाओं और कानूनी परिधियों से दूर इस क्षेत्र को संयुक्त राष्ट्र ने **मानव जाति की सामूहिक संपत्ति** की संज्ञा दी है।

1958 में जेनेवा में बनी संहिता के किसी भी कानून में गहरे समुद्र के खनिज भंडारों से संबंधित कोई ज़िक्र नहीं था। 1965 के आस-पास जब इन बहुधात्विक पिंडों का अर्थिक पहलू उजागर हुआ तब वैज्ञानिकों के साथ-साथ उद्योगपतियों, पूंजीपतियों, राजनीतिज्ञों की रुचि इनमें शनैः शनैः बढ़ चली। परिणामस्वरूप अब तक कानूनी सीमाओं से दूर इस क्षेत्र को भी कानूनी परिधियों में बांधने हेतु चर्चाएँ प्रारम्भ हो गई। 17 दिसम्बर 1973 को समुद्री कानून बनाने हेतु संयुक्त राष्ट्र (United Nations) का तीसरा सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में एक अन्तर्राष्ट्रीय समिति के गठन का प्रस्ताव पारित किया गया। इस समिति को समुद्र संबंधी सभी निर्णय, जैसे समुद्र और महासागरों के जैवीय एवं खनिज भंडारों के उपयोग, तटीय राज्यों की सीमा रेखाएँ, प्रदूषण से समुद्री पर्यावरण की सुरक्षा व महासागरों में शान्ति जैसे निर्णय लेने थे। इसके बाद हुए अनेकों सत्र, सभाओं एवं प्रस्तावों के द्वारा अंततः 1981 में 164 स्वतंत्र राष्ट्रों के संयुक्त राष्ट्र में हुए अधिवेशन ने मिलकर एक प्रारूप तैयार किया और सभी राष्ट्र उसकी शर्तों के अनुसार गहरे समुद्र से खनन के लिए सहमत हो गये। अमरीका एवं रूस जैसे कुछ विकसित राष्ट अपने अलग नियम बनाने के इच्छुक थे परन्तु ज़्यादातर राष्ट्रों के एकमत होने से उनका पक्ष कमज़ोर हो गया। 130 राष्ट्र प्रारूप से पूरी तरह सहमत थे, 4 असहमत और 17 अनुपस्थित। असहमत राष्ट्र हैं—अमरीका, तुर्की, इज़राइल और वेनेज़ुयेला। इस प्रारूप में विकासशील देशों के हितों को ध्यान में रखते हुए उन्हें तकनीकी हस्तांतरण एवं उत्पादन सीमा निर्धारण जैसी सुविधाओं में **समुद्र तल प्राधिकरण** (Sea bed Authority) द्वारा सहयोग का प्रावधान रखा गया। इसके अनुसार यदि कोई राष्ट्र इन नियमों का पालन नहीं करता है तो वह राष्ट्र, नियम उल्लंघन का दोषी माना जायेगा।

इस अधिवेशन के अन्तर्गत 4 प्रस्ताव पारित किए गए। इसमें से प्रस्ताव

3 और 4 का संबंध समुद्र के अन्य क्षेत्रों से था जबकि प्रस्ताव 1 के अन्तर्गत **आयोजनात्मक आयोग** (Preparatory Commission) के गठन, **अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र तल प्राधिकरण** (Sea Bed Authority) एवं **अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून न्यायालय** के गठन हेतु निर्णय लिया गया।

प्रस्ताव 2, बहुधात्विक पिंडों से संबंधित **प्रारंभिक कार्य** (Pioneer Work) जैसे—प्रारंभिक पूंजी निवेश पर नियंत्रण करने हेतु बनाया गया। प्रस्ताव 1 द्वारा गठित आयोजनात्मक आयोग को बहुधात्विक पिंडों से संबंधित कार्य प्रणाली बनाने हेतु सभी अधिकार प्राप्त थे। इस आयोग ने बहुधात्विक पिंडों से संबंधित जो नियम बनाये वे संक्षेप में इस प्रकार हैं :—

1. (i) वे राष्ट्र जिन्होंने पहली जनवरी 1983 याँ इससे पहले बहुधात्विक पिंडों से संबंधित **प्रारंभिक कार्यों** (Pioneer Work) हेतु कम से कम 300 लाख अमरीकी डालर खर्च किये हों तथा इस राशि का कम से कम 10% क्षेत्र के सर्वेक्षण में लगाया हो, वे **प्राथमिक पूंजी निवेशक** (Pioneer Investor) राष्ट्र होंगे। इस शर्त के अनुसार भारत, फ्रांस, जापान एवं सोवियत राष्ट्र संघ इस उपाधि के हकदार हैं।

   (ii) **प्रारंभिक कार्यों** में समुद्र में बहुधात्विक पिंडों की खोज के लिए किए गए सर्वेक्षण व सर्वेक्षण तकनीकी (Technology) का विकास शामिल हैं। इसके अतिरिक्त इन पिंडों के स्वभाव, आकार, आकृति, धातुमात्रा, भार तथा घनत्व आदि से संबंधित अध्ययन भी ***''प्रारम्भिक कार्य''*** की परिभाषा में शामिल हैं। पिंडों के आर्थिक महत्त्व का अवलोकन, खनन तकनीकी का विकास एवं खनन से संबंधित पर्यावरण पर प्रभाव आदि इस कार्य की परिभाषा के अंतर्गत वर्णित हैं।

   (iii) समुद्र तल पर मिलने वाले पिंड जिनमें निकिल, कोबाल्ट, कॉपर व मैंगनीज धातुएँ हों बहुधात्विक पिंड कहलाते हैं।

   (iv) **'आयोग'** द्वारा प्रारंभिक कार्यों के लिए **'पूंजी निवेशक'** को आवंटित क्षेत्र **पायनियर क्षेत्र** (Pioneer Area) कहलाता है। यह क्षेत्र 1,50,000 वर्ग किलोमीटर से अधिक नहीं होना चाहिए। समुद्री कानून की शर्तो

के अनुसार **प्राथमिक पूंजी निवेशक** को इस क्षेत्र का कुछ भाग निम्न क्रमानुसार छोड़ना होगा :—

(क) आवंटन के तीसरे वर्ष के अंत तक इस क्षेत्र का 20% भाग;

(ख) पाँचवे वर्ष के अंत तक अतिरिक्त 10% क्षेत्र; तथा

(ग) आठवें वर्ष के अंत तक 20% अन्य भाग।

2. आयोग के कार्यशील होने के बाद कोई भी राष्ट्र जिसने **तीसरी संयुक्त राष्ट्र सभा** में हस्ताक्षर किये हों वह **''प्रथम पूंजी निवेशक''** बनने हेतु आवेदन कर सकता है। इस आवेदन के साथ सर्वेक्षण पर खर्च की गई लागत का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए।

3. (i) प्रत्येक आवेदक को एक बड़े क्षेत्र का ब्यौरा देना होगा जिसमें कम से कम 2 खदानें (Mine) बन सकें। यह क्षेत्र एक ही जगह पर न होकर अलग-अलग भी हो सकते हैं। इन दोनों खदानों में बहुधात्विक पिंडों का विस्तार, भार, धातुमात्रा तथा कुल व्यापारिक मूल्य बराबर होना चाहिए। महासागर में अक्षांश-देशान्तर रेखाओं के बीच इनकी स्थिति संपूर्ण विवरण के साथ आयोग के पास भेजी जानी चाहिए।

   (ii) उपरोक्त सूचनाओं के साथ आवेदन प्राप्ति के 45 दिन के अंदर ही इन दोनों में से एक क्षेत्र आयोग अपने पास (भविष्य में अन्य विकासशील राज्यों या इण्टरप्राइज के लिए) रखकर आवेदक को दूसरा क्षेत्र **सम्पूर्ण स्वामित्व** (Exclusive Rights) का अधिकार देकर सौंप देगा।

4. कोई भी **पूंजी निवेशक** एक से अधिक क्षेत्र के लिये आवेदन नहीं कर सकता है।

5. (i) कोई भी अन्य राष्ट्र यदि किसी क्षेत्र के लिए आवेदन करना चाहता है, तो उसे इस बात का ध्यान रखना होगा कि यह क्षेत्र, पहले किसी राष्ट्र को आवंटित किये गए क्षेत्र का हिस्सा न हो। यदि किसी परिस्थिति में ऐसा हो जाता है तो दोनों राष्ट्र इस समस्या को आपस में सुलझाने की कोशिश करेंगे और इसकी सूचना आयोग को देते रहेंगे।

(ii) उपर्युक्त झगड़े को यदि दोनों राष्ट्र आपस में न सुलझा सकें तो इनके सभी दावे **पंचायती कानूनी नियमों** के अनुसार पूरे किये जायेंगे।

(क्षेत्र का यह भाग दोनों में से किस आवेदक को दिया जायेगा, इसके संबंध में बनाए अनुच्छेदों का विवरण यहाँ करने की जरूरत नहीं है क्योंकि भारत का खनन क्षेत्र इन सब विवादों से परे है।)

6. **प्राथमिक पूंजी-निवेशक** को पंजीकरण की तिंथि के बाद से इस क्षेत्र में प्राथमिक क्रियाओं के लिये सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे।
7. (i) आवेदक को आवेदन-पत्र के साथ सभा द्वारा स्वीकृत फीस (250,000 अमरीकी डालर) आयोग को देनी होगी।
   (ii) प्रत्येक आवेदक को क्षेत्र आवंटन की तिथि के बाद से प्रतिवर्ष 10 लाख अमरीकी डालर फीस देनी पड़ेगी।

(भारत ने आयोग की सम्मति से यह फीस खनन शुरू होने तक न देने का निर्णय लिया है।)

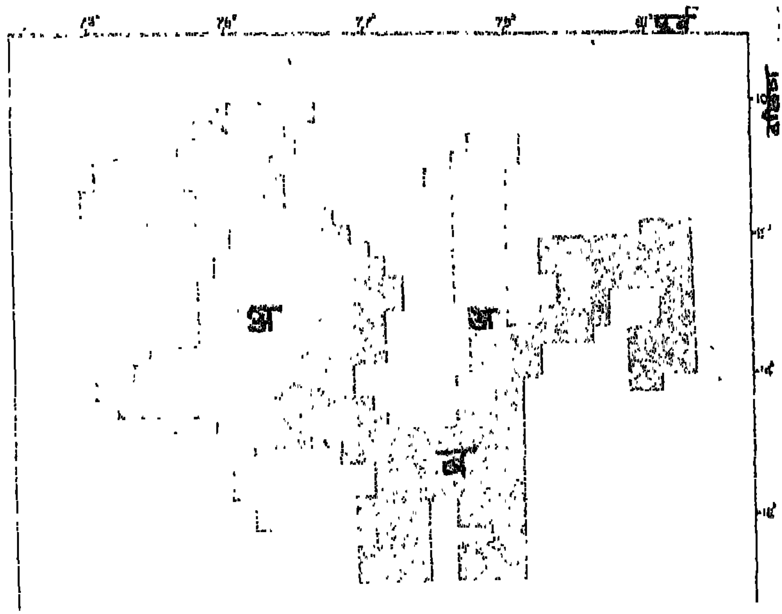
8. **पंजीकृत प्राथमिक पूंजी निवेशक** को 6 माह के अंदर अपनी कार्य-योजना आयोग को देनी होगी। जिसमें आर्थिक एवं तकनीकी हस्तान्तरण जैसी सभी आवश्यकताओं का सम्पूर्ण उल्लेख होना चाहिए।
9. **पूंजी निवेशक** प्राधिकरण को जब यह सूचित करेगा कि अब से 5 वर्ष के अंदर ही वह **व्यापारिक खनन** (Commercial Mining) शरू करने वाला है, आयोग उसे **उत्पादकता अधिकार** प्रदान कर देगा। यदि किसी कारणवश आयोग को सूचित करने के बाद भी निवेशक 5 साल के अंदर उत्पादन न शुरू कर सके तो उसे पुनः खनन-कार्य 5 साल तक बढ़ाने के लिये आवेदन करना पड़ेगा। दूसरे निवेशक जिन्होंने अतिरिक्त समय की मांग नहीं की हो, उन्हें हर हालत में काम शुरू करने की प्राथमिकता होगी।
10. समुद्र तल प्राधिकरण तथा इसकी सभी शाखाओं को उपर्युक्त प्रस्ताव 2 के अंतर्गत बनाए सभी नियमों एवं आयोग के अधिकारों का आदर करना होगा।

# भारतीय खनन क्षेत्र

स्वतंत्रता की चालीसवीं वर्षगांठ मनाकर भारत अभी उठा ही था कि 17 अगस्त 1987 के दिन उसे एक नई खुशी की खबर सुनाई दी। देश के 24 राज्यों में उड़ीसा के क्षेत्रफल के लगभग बराबर जलमग्न खनिजों से भरी भूमि पर देश के **संपूर्ण अधिकार** प्राप्ति की खबर (चित्र 45)। यह भूमि मध्य हिंद महासागर में 5000 मीटर पानी तले है और इस पर बिखरे हुए हैं खनिजों के भावी स्रोत बहुधात्विक पिंड।

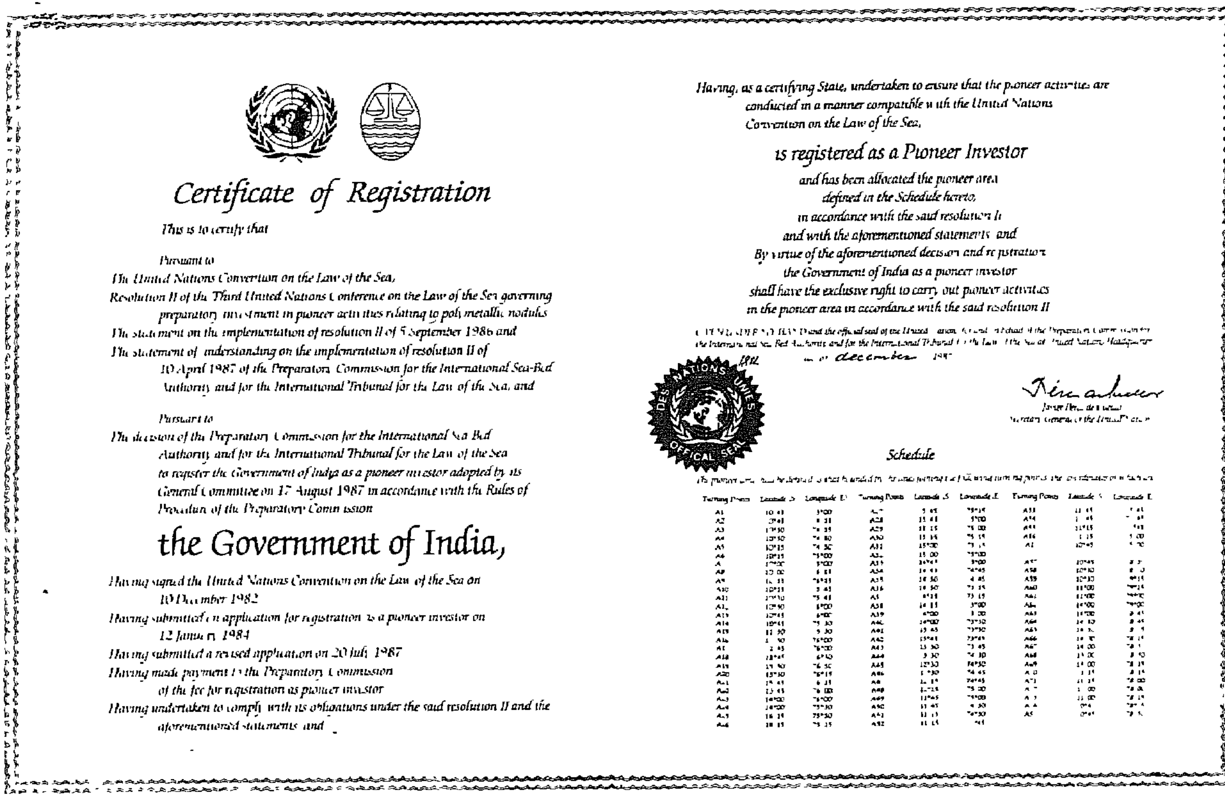
17 अगस्त 1987 को न्यूयार्क में **अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र तल प्राधिकरण** की बैठक में भारत के आवेदन पत्र पर जांच चल रही थी। आयोग द्वारा गठित **महासमिति** (General Assembly) द्वारा मुख्यतः निम्न घोषणाओं को परखा जा रहा था :—

1. आवेदक (यानी भारत) संयुक्त राष्ट्र में हुई सभा में 10 दिसम्बर 1982 को हस्ताक्षर कर चुका है।
2. आवेदक का याचिका क्षेत्र (Application Area) 'मध्य हिंद महासागर' अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र क्षेत्र का भाग है जो किसी भी राष्ट्र की कानूनी सीमा से हटकर है।
3. आवेदक ने आयोग को विश्वास दिलाया है कि इस क्षेत्र हेतु किसी भी अन्य देश ने पूर्ण या आंशिक रूप से आवेदन नहीं किया है।
4. आवेदक, आयोग द्वारा निर्धारित 2,50,000 अमरीकी डॉलर पंजीकरण फीस किसी भी समय देने को तैयार है।
5. आवेदक ने किसी अन्य क्षेत्र में खनन-क्षेत्र के लिए आवेदन नहीं किया है।




**चित्र 45 :** हिन्द महासागर मे आवंटित क्षेत्र। **क्षेत्र (अ)** भारत को आवटित 153,000 वर्ग किलोमीटर। **क्षेत्र (ब)** समुद्रतल प्राधिकरण के लिए आरक्षित 150,000 वर्ग किलोमीटर।

6. आवेदक ने परिच्छेद 12 के अनुसार बहुधात्विक पिंडों के सर्वेक्षण आदि के संदर्भ में निर्धारित पूंजी खर्च की है।
7. आवेदक समुद्री वातावरण के संरक्षण के लिए आयोग द्वारा बनाए सभी नियमों का पालन करने को तैयार है।
8. आवेदन, प्रस्ताव 2 के दस्तावेजों में लिखित वक्तव्यों के अनुसार है।
9. आवेदन क्षेत्र की महासागर में अक्षांश एवं देशांतर रेखाओं के बीच स्थिति का सम्पूर्ण विवरण संलग्न है।
10. दोनों खनन क्षेत्र अ (A) एवं ब (B) में लगभग बराबर आर्थिक व्यापारिक मूल्य के धातु भंडार हैं; अतः
    (क) क्षेत्र ब (B) को समुद्र तल प्राधिकरण के लिए आरक्षित घोषित किया जा सकता है; और



Certificate of Registration

This is to certify that

Pursuant to

The United Nations Convention on the Law of the Sea,

Resolution II of the Third United Nations Conference on the Law of the Sea governing preparatory investment in pioneer activities relating to polymetallic nodules

The statement on the implementation of resolution II of 5 September 1986 and

The statement of understanding on the implementation of resolution II of 10 April 1987 of the Preparatory Commission for the International Sea-Bed Authority and for the International Tribunal for the Law of the Sea, and

Pursuant to

The decision of the Preparatory Commission for the International Sea-Bed Authority and for the International Tribunal for the Law of the Sea to register the Government of India as a pioneer investor adopted by its General Committee on 17 August 1987 in accordance with the Rules of Procedure of the Preparatory Commission

the Government of India,

Having signed the United Nations Convention on the Law of the Sea on 10 December 1982

Having submitted an application for registration as a pioneer investor on 12 January 1984

Having submitted a revised application on 20 July 1987

Having made payment to the Preparatory Commission of the fee for registration as pioneer investor

Having undertaken to comply with its obligations under the said resolution II and the aforementioned statements and

Having, as a certifying State, undertaken to ensure that the pioneer activities are conducted in a manner compatible with the United Nations Convention on the Law of the Sea,

is registered as a Pioneer Investor

and has been allocated the pioneer area defined in the Schedule hereto, in accordance with the said resolution II and with the aforementioned statements and

By virtue of the aforementioned decision and registration the Government of India as a pioneer investor shall have the exclusive right to carry out pioneer activities in the pioneer area in accordance with the said resolution II

[illegible]

December 1987

Javier Pérez de Cuéllar

Secretary-General of the United Nations

Schedule

[illegible]

| Turning Points | Latitude S | Longitude E | Turning Points | Latitude S | Longitude E | Turning Points | Latitude S | Longitude E |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| A1 | 10 41 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A2 | [illegible] | [illegible] | A28 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A3 | [illegible] | [illegible] | A29 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A4 | [illegible] | [illegible] | A30 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A5 | [illegible] | [illegible] | A31 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A6 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | 15 00 | [illegible] | | | |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A8 | [illegible] | [illegible] | A34 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A9 | [illegible] | [illegible] | A35 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A10 | [illegible] | [illegible] | A36 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A11 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A38 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A39 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A14 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A41 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A42 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A43 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A18 | [illegible] | [illegible] | A44 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A19 | [illegible] | [illegible] | A45 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| A20 | [illegible] | [illegible] | A46 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A48 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A49 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A50 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A51 | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] | [illegible] |
| [illegible] | [illegible] | [illegible] | A52 | [illegible] | [illegible] | | | |

चित्र 46 : संयुक्त राष्ट्र द्वारा भारत को प्रथम पूंजी निवेशक की उपाधि का प्रमाण पत्र।

(ख) क्षेत्र अ (A) 150,000 वर्ग किलोमीटर (आवेदक को 'सम्पूर्ण स्वामित्व' का अधिकार देकर) आवंटित किया जा सकता है।

कानूनी नज़रिये से जाँचने के पश्चात् इस महासमिति ने भारत की याचिका उचित पाई। इस समिति ने **संयुक्त राष्ट्र सभा** के महासचिव (Secretary General) से अनुरोध किया कि वे आयोग के सभी सदस्यों को बैठक का निर्णय बता दें। समिति द्वारा इससे संबंधित प्रमाण पत्र (चित्र 46) में सब स्पष्ट अंकित कर भारत (आवेदक) को देने की सिफारिश की गई। अतः **अंतर्राष्ट्रीय समुद्र प्राधिकरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री नियम न्यायालय** द्वारा गठित आयोजनात्मक आयोग के अध्यक्ष श्री जोस लुई जीसस ने निम्न वर्णन प्रमाण-पत्र पर लिखकर प्रमाणित किया :

***"मैं यह प्रमाणित करता हूँ कि उपर्युक्त निर्णय महासमिति द्वारा 17 अगस्त 1987 को लिखा गया"—श्री जोस लुई जीसस।***

यह प्रमाण पत्र भारत के वैज्ञानिकों, इंजीनियरों, प्रबंधकों एवं राजनीतिज्ञों द्वारा इस बहुमुखी योजना हेतु किये गए सम्मिलित प्रयास की सफलता का द्योतक है।

# उपसंहार

*"गहरे समुद्र में खनन-क्षेत्र के पंजीकरण हेतु हमारा दावा वास्तव में स्वदेशी वैज्ञानिक क्षमताओं का ठोस प्रमाण है।"* स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने 26 अगस्त 1987 को संसद में यह वक्तव्य देते हुए आगे कहा, *"मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे वैज्ञानिक एवं इंजीनियर, जिन्होंने विज्ञान के नए क्षितिज (सागर के रहस्य) को खोलने का साहसपूर्ण कार्य हाथ में लिया है, उनके द्वारा किए गए इस श्रेष्ठ कार्य के प्रति हमारी प्रशंसा को यह सदन लिपिबद्ध करेगा।"*

स्वर्गीय प्रधानमंत्री का अंग्रेजी में दिया गया यह वक्तव्य (Statement) संयुक्त राष्ट्र द्वारा 17 अगस्त 1987 को भारत को मध्य हिंद महासागर में बहुधात्विक पिंडों के सर्वेक्षण एवं खनन कार्यों हेतु 150,000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में प्राप्त **सम्पूर्ण स्वामित्व** की घोषणा से संबंधित था। भारत, विश्व का प्रथम देश है जो स्वयं विकासशील होते हुए भी यह सम्मान प्राप्त कर सका।

सर्वेक्षण के क्षेत्र में प्राप्त इस सिद्धहस्तता का उपयोग कर भारत ने सिसिली (Seychelles) एवं मॉरीशस सरकारों के अनुरोध पर उनके 'अनन्य आर्थिक क्षेत्र' (Exclusive Economic Zone) का सर्वेक्षण किया है। इन परिणामों के आधार पर भारत ने इन देशों को बहुधात्विक पिंडों की उपस्थिति वाले क्षेत्रों का सर्वेक्षण करने की सलाह दी है।

गहरे समुद्र के खनन से देश को एक नया तकनीकी आधार मिलने की संभावना है। इस नये उद्योग से अनेकों लोगों को रोज़गार मिल सकेगा। कुछ वैज्ञानिक आर्थिक महत्व की धातुएँ निकालने के बाद अपशिष्ट पदार्थ से भवन निर्माण सामग्री, खिलौने, गमले आदि बनाने के समानान्तर उद्योग की बात भी सोचने लगे हैं।

सर्वेक्षण की सफलता के बाद भारत में खनन तकनीक (Mining Technology) का विकास होने तक कुछ वर्षों का समय व्यतीत होने की आशा है। विज्ञान के इस नए क्षेत्र में प्रवेश करने से देश को न केवल समुद्री वातावरण की विभिन्न परिस्थितियों के अध्ययन एवं खनिजों की उपलब्धि होगी, वरन उच्च तकनीकी के विकास में भी सहायता मिलेगी।



सुदूर समुद्र में अनोखा प्राकृतिक साम्राज्य देखने को मिलता है। सूर्यास्त के समय लगता है मानो सूरज समुद्र मे डूबा जा रहा हो। उड़ने वाली मछलियों को देखकर चिड़ियों का भ्रम होता है। जुगनू की तरह चमकने वाले (Bioluminescene) ऑस्ट्रोकॉड और मछलियाँ, पानी में इस तरह टिमटिमाते दिखते है जैसे संपूर्ण तारा मण्डल की परछाई समुद्र में पड़ रही हो। चांदनी रातों में समुद्र में दूर-दूर तक पड़ती चन्द्र किरणें बहुत ही मनमोहक लगती है। कभी-कभी कोई भटकी चिड़िया (Sea Gull) डरी हुई सी आकर जहाज पर बैठ जाती है तो वह कभी-कभी पूरी समुद्री यात्रा तक साथ देती है।

# कुछ संबंधित संदर्भ

1. डा. एस.जेड. कासिम एवं डा. आर.आर. नायर द्वारा 1988 मे संपादित—**फ्राम फर्स्ट नोड्यूल टु फर्स्ट माइन साइट : एन एकाउन्ट ऑफ दि पॉलीमेटैलिक नोड्यूल प्रोजेक्ट।** *प्रकाशक*— महासागर विकास विभाग नई दिल्ली एवं राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा।
2. यूनाइटेड नेशन्स की ओशन एकोनामिक्स एवं टेक्नॉलाजी ब्रान्च के सहयोग से ग्राहम एण्ड ट्राटमैन लिमिटेड द्वारा *प्रकाशित*—
   (1) **असेसमेंन्ट ऑफ एक्सप्लोरेशन एण्ड माइनिंग टेक्नालॉजी फॉर मैंगनीज़ नोड्यूल्स**— भाग 2, 1984
   (2) **एसेसमेंट ऑफ मैंगनीज़ नोड्यूल रिसोर्सिज**— भाग-1 1992
   (3) **एनालेसिस ऑफ प्रासेसिंग टेक्नालॉजी फार मैंगनीज़ नोड्यूल्स**—भाग 3, 1986
3. जे.एस. पियरसन द्वारा 1975 में लिखित **ओशन फ्लोर माइनिंग**। *प्रकाशक*— नोयस डेटा कार्पोरेशन, लन्दन।
4. एच.थील, ई.जे. फोयल एवं जी श्रीवर द्वारा लिखित **पोटेन्शियल एन्वायरनमेंटल एफेक्ट्स ऑफ डीप सी बेड माइनिंग**। इन्स्टीट्यूट ऑफ हाइड्रोबायलॉजी एण्ड फिशरी, हैम्बर्ग द्वारा 1991 में छपी रिपोर्ट नं. 26, आई. एस. एस. नं. 0936 — 949
5. ऐलिजाबेथ मान--बारगीज द्वारा 1975 में लिखित **दि ड्रामा ऑफ दि ओशन्स।** *प्रकाशक*—हैरी एन एब्राहम, आई एन सी पब्लिशर्स, न्यूयार्क।
6. एन. सी. फ्लेमिंग, मुख्य सम्पादक, **दि अण्डर सी** 1977, *प्रकाशक*—कैसेल एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क।
7. जी.ई. डिकन, मुख्य सम्पादक, **ओशन्स, एन एटलस-हिस्ट्री ऑफ मैन्स एक्सप्लोरेशन आफ दि डीप** 1962, *प्रकाशक*—पाल हैमलियन वेस्ट बुक हाउस, लंदन।
8. सी.पी. आइडिल, संपादक, **एक्सप्लोरिंग दि ओशन वर्ड,** 1969, *प्रकाशक*—थॉमस वाय, क्रोवेल कम्पनी, न्यूयार्क।
9. भारतीय खान ब्यूरो की **मिनरल इअर बुक,** 1991, नागपुर।